पाप का फल

पाप का फल

अनुवादकः—

पं० पारसनाथ त्रिपाठी

शाहपुर पट्टी, (शाहाबाद)

प्रकाशक—

खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर.

बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.

१९१९.

प्रथमवार १०००] [मूल्य ।≡)

दो चार शब्द ।

सर्वसाधारण के सम्मुख अच्छा आदर्श रख कर शिक्षा देने का मैं हृदय से पक्षपाती हूं । मैं स्वप्न में भी नहीं चाहता, कि किसी के सामने किसी प्रकार का बुरा आदर्श रखा जाय; पर जब, समाज, बुरी दशा में पड़ा हो, अपने कर्त्तव्य-पथ से विचलित हो चला हो, तब उसके बुरे कामों का बुरा परिणाम दिखा कर भी उसे शिक्षा देना उतना बुरा नहीं । यही सोच कर आज अपने भारतीय-समाज की सेवा में यह तुच्छ भेंट सादर सप्रेम समर्पण करता हूं ।

यद्यपि निष्ठुरता, अन्याय, उत्पीड़न का कभी कोई विचारशील पक्षपाती नहीं रहा । पर इस बीसवीं सदी में साम्यवाद की प्रबलता के समय इसका चारो ओर से घोर प्रतिवाद खुले आम चारो ओर हो रहा है । ऐसी दशा में अहम्मन्य अत्याचारी ज़मीन्दारों का दुष्परिणाम दिखा, उनकी आंखें खोलना मनुष्य मात्र का धर्म है । मेरी इस तुच्छ भेंट से इस विषय में मुझे कुछ भी सफलता मिली तो, मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा ।

जिन पं० चन्द्र शेखर कर विद्याविनोद की "अनाथ बालक" "चार दाने" प्रभृति पुस्तकों को हिन्द-संसार अपना चुका है: प्रस्तुत पुस्तक भी उन्हीं महाशय की लेखन-कुशलता का नमूना है । आशा है, यह पुस्तक भी उन्हीं पुस्तकों की तरह आदर पावेगी ।

कागज की बहुमूल्यता के समय सर्वसाधारण में इसका प्रचार करने के उद्देश्य से खड्गविलास प्रेस के प्रोप्राइटर श्री मान् राय-साहब रामरणविजय सिंह ने इस पुस्तक को प्रकाशित करने की जो कृपा की है, उस के लिये उन्हें धन्यवाद नहीं देना कृतघ्नता होगी ।

२६-३-१६ । हिन्दी-रसिकों का सेवक,
पारसनाथ त्रिपाठी ।

समर्पण ।

जिनके शान्तिमय आश्रय में यह पितृ-हीन बालक, पितृ-सुख से बञ्चित नहीं होने पाया, जिनकी पूजा-पाठ का एक मात्र उद्देश्य मेरी—मंगल कामना ही है, अपनी रुग्णावस्था का कुछ भी खयाल न कर जिन्होंने सारी गृहस्थी का भार अपने ऊपर ले मुझे साहित्य-सेवा के लिये छोड़ दिया है, जो इस संसार में मेरे एक मात्र शुभचिन्तक हैं, जो मेरे बिना स्वर्ग को भी अन्धकार-मय समझने वाले हैं, उन्हीं अपने पितृ-तुल्य पूज्याग्रज परिडत बदरी नरायण त्रिपाठी जी

के चरण कमल में

भक्ति पुरस्सर

समर्पित.
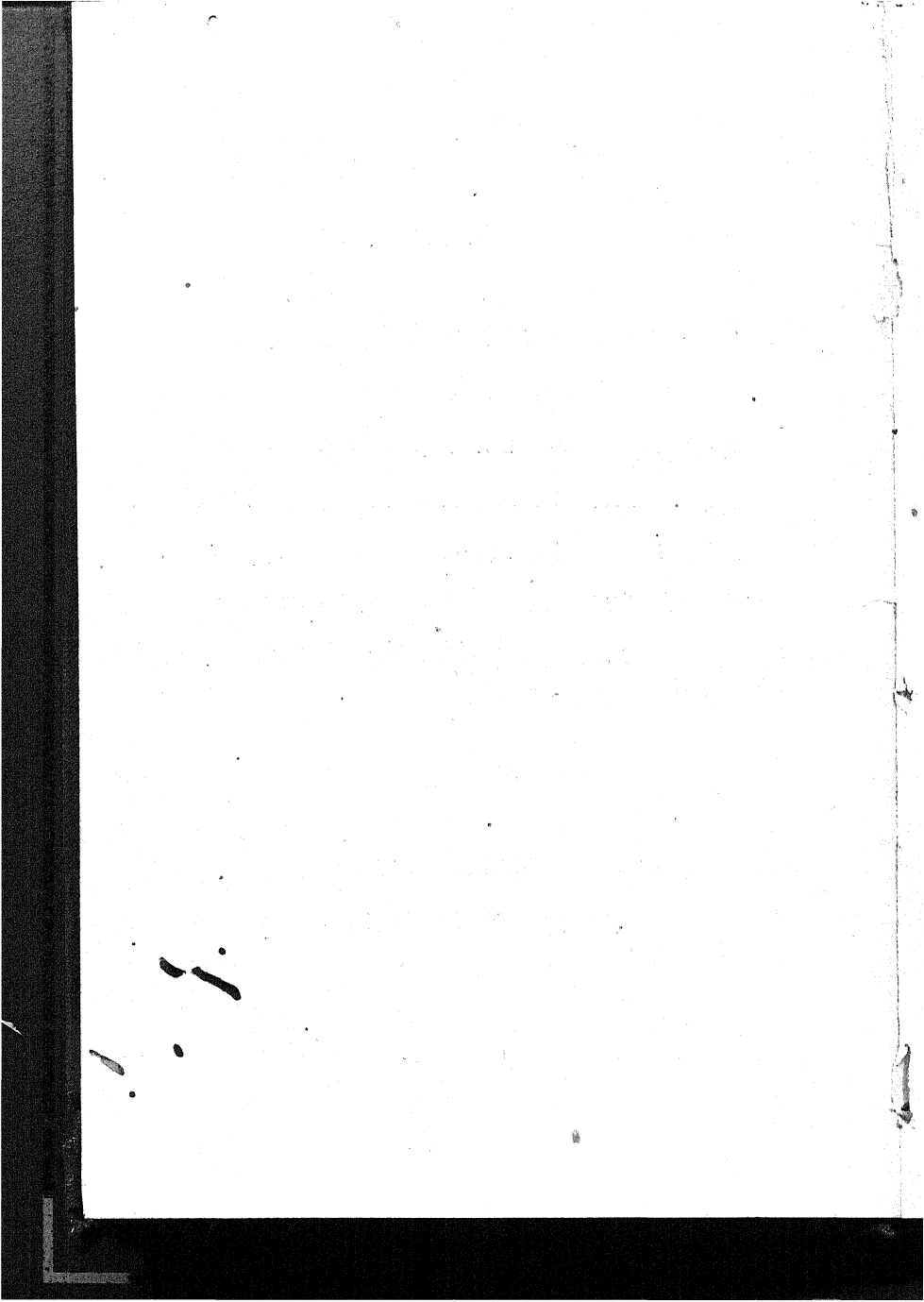
श्रीदुर्गायै नमः ।

पाप का फल

पहला परिच्छेद ।

फागुन का महीना शुरू हो गया है; पर "रस्सी जल गयी, गांठ मौजूद है" की तरह शीत-काल नहीं रहा; पर अभी तक जाड़े की कंपकपी दूर नहीं हुई है। दिन के पहले पहर का समय है। बलिया जिला के कृपालुपुर ग्राम निवासी बाबू रामसुन्दर सिंह जी, अपने मन्दिर में भगवान् की पूजा कर, मन्दिर के जगमोहन में मुकुटा पहने, हाथ में माला लिये बैठ कर भगवान् का नाम ले रहे हैं। इसी समय हरिहर मिश्र जी वहीं आ पहुंचे। उन के आते ही बाबू रामसुन्दर सिंह उठ खड़े हुए, झुक कर बड़े विनय के साथ प्रणाम किया और आशीर्वाद लेकर—" इधर आइये, यहां बैठिये, बड़ी कृपा हुई" आदि समयोचित सम्भाषण से मिश्रजी को गद्‌गद करने लगे। मिश्र जी पुराने सांचे के ढले ब्राह्मण थे, बाहर से जूता पहने आ रहे हैं। इस से बिना पांव प्रक्षालन किये मन्दिर में जाते नहीं बना। मिश्रजी के पांव धोने के लिये जल मांगने पर बाबू राम-सुन्दर ने नौकर से जल मांगा। जबतक जल नहीं आया, तब तक हमारे विनयी बाबू साहब खड़े रहे, और मिश्र जी मन्दिर के बाहर

ही खड़े हो कर मन्दिर की बनावट देखने लगे; पर उन का ध्यान था जल लाने वाले नौकर पर। रास्ते की थकावट से थके मिश्र जी को मन्दिर की बनावट वगैरह अच्छी नहीं लगती थी; पर बाबू साहब की खातिर से आप ऐसा भाव दिखा रहे थे, जिस से मालूम हो कि आप इस समय उस मन्दिर को रचना पर ही मुग्ध हो रहे हों! रामसुन्दर जाति में ढेकहा राजपूत हैं, और मिश्र जी शाकद्वीपीय ब्राह्मण। बाबू साहब की अवस्था ४० वर्ष की होगी। मिश्र जी उमर में इन से बड़े होंगे; किन्तु दोनों का आकार-प्रकार देखने से रामसुन्दर ही बड़े मालूम होते हैं। रामसुन्दर की आज्ञा से भृत्य ने पांव धोने के लिये जल ला दिया। वह मिश्र जी को बहुत दिनों से जानता है, उसे यह बात विदित थी कि जहां मिश्र जी बैठे वहां सुरती की मांग हुई! इसी से वह साथ में सुरती भी लेता आया था। मिश्र जी ने पांव धो, भगवान् को "आदौ राम तपोवनादिगमनं" पढ़ कर साष्टाङ्ग दण्डवत् किया; फिर नौकर के हाथ से सुरती ले, उसे मलते २ रामसुन्दर के साथ वार्तालाप करना आरम्भ किया।

"आप से मुझे कभी भेंट नहीं होती थी। इस मकान पर मैं कई बार आ चुका हूं। आप उस समय बराबर नौकरी ही पर रहते थे।"

अब तक मिश्र जी की सुरती भी तैयार हो गयी थी, उस पर बायें हाथ से एक थप्पड़ जमा कर, आपने उसे मुख में रख लिया।

राम सुन्दर—जी हां, मैं बराबर अपनी नौकरी ही पर रहता था, इसी से आप जैसे महात्माओं के पवित्र दर्शन से वञ्चित

रहा। भाई साहब की मृत्यु होने से सब छोड़छाड़ अब घर पर रहने का विचार किया है। अब बिना घर पर एक आदमी के रहे, काम चलने वाला नहीं।

मिश्र जी—परमात्मा ने आप को जो दिया है, वही क्या कम है कि आप नौकरी करेंगे? आप को तो नौकरी की कोई ज़रूरत थी नहीं, शौक से कर ली थी।

राम०—जब तक भाई साहब जीते थे, तब तक मुझे घर का कोई काम नहीं करना पड़ता था; बेकाम रहना अच्छा नहीं है, यही सोच कर नौकरी कर ली थी।

मिश्र०—आप तो नारायणपुर की कचहरी में तहसीलदार का काम करते थे?

राम०—जी हां—(नौकर से) महाराज जी अब स्नान करेंगे, इन के लिये भीतर से तेल ला दो।

मिश्र०—मेरी मिल्की की कुछ मालगुज़ारी बाकी है।

राम०—अच्छा, कोई हर्ज़ नहीं है। पहले खा पी कर निबट तो लें। इस महीने में दो चार दिन और यदि आप नहीं आते, तो मैं स्वयं मालगुज़ारी भेज देता। भैय्या सब का हिसाब किताब ठीक कर गये हैं। किसी की एक कौड़ी भी इधर उधर होने वाली नहीं।

मिश्र०—इस का तो मुझे पूरा विश्वास है। हिसाब-किताब में वे बड़ी सफ़ाई रखते ही थे।

राम०—अच्छा, अब जाकर आप जल्द स्नान कर लें। रसोई भी बनाना पड़ेगा।

मिश्र जी ने स्नान, सन्ध्या से छुट्टी पा देखा, कि रसोई का इन्तजाम बड़े अच्छे ढंग से हुआ है। राम सुन्दर के बड़े भाई, जिस समय जीवित थे, उस समय जैसी तैयारी होती थी, खाने पीने में जैसी खातिरदारी होती थी, राम सुन्दर ने उस से भी अधिक श्रद्धा, और भक्ति से ब्राह्मण के भोजन का प्रबन्ध किया है। जब तक मिश्र जी रसोई बनाते रहे, तब तक रामसुन्दर सामने के आंगने में खड़े थे। रामसुन्दर की कमर में पाट की धोती और हाथ में तुलसी की माला थी। रामसुन्दर के होंठ कंपते देखने से, तथा बीच २ में माला की खड़खड़ाहट सुनने से मालूम होता था कि रामसुन्दर जप कर रहे हैं। मिश्र जी की रसोई बन कर तैयार हो गयी है; वे खाने की तैयारी में हैं, इसी समय भीतर से एक नौकर ने आकर रामसुन्दर से कहा—"चौका लगा है, चलिये बाबू!"

रामसुन्दर ने क्रुद्ध सा हो कर कहा—"चल, हट, अभी यहां देवता की सेवा हुई नहीं; पहले मैं ही भोजन कर लूं!"

नौकर—आज तो आपने जलखावा भी नहीं किया है, दिन भी बहुत चढ़ गया है।

मिश्र जी ने कहा—"जाइये, अब आप भोजन कीजिये। मेरा तो तैयार ही हो गया, अब तो खाना ही न है!"

राम०—ऐसा न कहिये। ब्राह्मण ने भोजन ही नहीं किया और मैं हो पहले भोजन कर लूं। वह मूर्ख है—उसे तो खर भर भी अकल नहीं है।

मिश्र०—ब्राह्मणों की भक्ति करना, आप की खानदानी चाल है।

राम०—जी, हां—हां—हां (इस समय राम सुन्दर ने ऐसा भाव दिखलाया, जिस से ज्ञात हो कि वे अत्यन्त लज्जित हुए हैं)।

मिश्र जी ने भोजन किया, उस के बाद रामसुन्दर ने भी भोजन किया। तब दोनों ने थोड़ी देर तक आराम भी किया।

दो पहर के बाद मिश्र जी ने कहा—"यदि मालगुज़ारी मिल जाती, तो मैं अब चलता।"

राम०—अरे, अब आज कहां जायंगे ?

मिश्र०—नहीं, जाना ज़रूरी है। मकान पर कुछ बहुत ज़रूरी काम हैं। आज यहां से चल कर रात में राजपुर जा कर ठहर जाऊंगा। कल दक्षिण जाना है। वहां भी कुछ मालगुज़ारी बाकी पड़ी है।

राम०—"भला! यहां कौन ऐसा गांव है, जहां आप की मिलकी न हो ?"

मिश्र०—यह सब बाप दादों की कमाई है—अब कहां मिल्की मिलती है ?

राम०—इस समय कौन किस को देता है ? यहां तो मिल्की पर 'तनाज़ा' देने की ही पड़ी है। अब पहले जैसे धर्मात्मा राजा कहां हैं ?

मिश्र०—हां भाई, सचमुच बड़ा बुरा समय आ गया है, कलिकाल न है! जो न हो जाय!

बात बढ़ती देख मिश्र जी ने यही संक्षिप्त उत्तर दे कर कहा—"तो अब मालगुज़ारी मिल......"

राम०—हां—अभी कागज़ देखता हूं। एक ही वर्ष की मालगुज़ारी बाकी है न ?

राम सुन्दर ने बही निकाल कर भैंस खरीदवाने में ३१३) रुपये, पत्थर खरीदने में ५१५।≡) इत्यादि कई इधर उधर की बातें सुना कर अन्त में कहा—"यही तो आप का नाम है, आपही के मारफ़त तो मालगुज़ारी दी गयी है। कैसा साफ़ २ हिसाब है, रामयादव मिश्र किन का नाम है ?"

मिश्र०—वे मेरे प्रपितामह थे, मिल्की उन्हीं के नाम है।

राम०—कितनी मालगुज़ारी लगती है ?

मिश्र०—सत्रह रुपये, सात आने।

राम०—हां, यह क्या ? आप के कहने और इस हिसाब से तो बहुत फ़र्क़ पड़ता है। इस में तो कुल ४५-)॥। लिखा है। शायद और दूसरा कोई जमा हो।

मिश्र०—यह क्या ? मेरा दूसरा कोई खेत आप नहीं जोतते हैं।

राम०—(काग़ज़ देख कर) हां, इस में भी तो नहीं लिखा है।

मिश्र०—लिखने में ज़रूर भूल हुई है। मैं आज बीस वर्ष से सत्रह रुपये सात आने मालगुज़ारी बराबर अपने ही ले जाता हूं।

राम०—पर मेरे भाई साहब कच्चा काम नहीं करते थे।

मिश्र०—हां, यह तो मैं भी जानता हूं; उन से मुझे खूब हेल-मेल थे मुझे तो यही आश्चर्य्य है कि उन से ऐसी भूल कैसे हुई ? लिखा तो उन्हीं के हाथ का है ?

राम०—नहीं, उनके हाथ की लिखावट तो नहीं है; किन्तु उन ने जैसा कहा है, वैसा ही इस गोपाल ने, जो मेरा मुहर्रिर है, लिख दिया है। पर और किसी का तो ज़रा भी गड़बड़ नहीं हुआ है।

मिश्र०—कुछ समझ में नहीं आता। रसीद तो आप के पास ज़रूर होगी, दो चार वर्ष की रसीद निकाल कर देखिये तो उस में क्या लिखा है ? उस से पता लग जायगा।

राम०—मुझे तो मालूम होता है कि आप ही से भूल हो रही है। आप की मिल्की कई गांवों में है। आप को किसी दूसरी मिल्की की मालगुज़ारी इतनी मिलती होगी, उसे ही भूल से आपने इसी मिल्की की मालगुजारी समझ ली है।

"नहीं, ऐसा भी कभी हो सकता है !" कह कर मिश्र जी ने अपने 'बास्ते' से एक काग़ज़ निकाला और उसे रामसुन्दर को दिखलाया। उस में साफ़ २ लिखा था—श्यामसुन्दर सिंह और रामसुन्दर सिंह १७।≡)

राम०—यही तो मैं भी सोच रहा हूं कि इतना गड़बड़ कैसे हो गया ?

मिश्र०—गड़बड़ कुछ नहीं है, आप दो चार साल की रसीद मंगाइये न।

राम०—जिस बक्स में रसीद रहती है, उस की ताली भाभी के पास है, और वे कल भूल से ताली लिये ही, अपने मैके चली गयी हैं।

मिश्र०—तब कैसे काम चलेगा ?

राम०—मैं जो मालगुज़ारी देता हूं, इस समय आप वही लेते जायं, साथ २ कुछ पूजा भी दूंगा।

मिश्र०—उस पूजे से क्या होता है ? आप की बात सुनते ही मेरा दिमाग़ चक्कर खा गया है। मालगुज़ारी तो एक दो दिन के लिये नहीं, सदा के लिये है।

राम०—बात तो ऐसी ही है।

मिश्र०—आप कितनी ज़मीन जोतते हैं, सो तो जानते हैं? ५० बीघे से कम नहीं है।

राम०—मिल्की की मालगुज़ारी का शरह बहुत कम होता है। पहले तो बहुत ब्राह्मणों को मालगुज़ारी ही नहीं मिलती।

मिश्र०—हां, हो सकता है—तो अब क्या होगा? क्या इस समय मैं चलूं?

राम०—मालगुज़ारी नहीं लीजियेगा?

मिश्र०—जब तक इस का कुछ निबटारा न हो ले, तब तक कैसे ले सकता हूं? आप वहां से तालो मंगा कर दो चार साल की रसीदें मंगा कर देखियेगा, मैं दक्षिण से लौटतो बार यहां से होता जाऊंगा।

राम०—बहुत अच्छा। ब्राह्मण की मिल्की ठहरी, उस की मालगुज़ारी में से एक पैसा भी खाने की इच्छा नहीं रखता; पर भाई साहब के काग़ज़ों में किसी का हिसाब, किताब गड़बड़ नहीं हुआ है।

मिश्र०—कैसे क्या कहूं, कुछ समझ में नहीं आता?

मिश्र जी उठ खड़े हुए। रास्ते में जाते समय उन्हें मालगुज़ारी ही की चिन्ता रही, वे सोचने लगे—"श्यामसुन्दर सिंह ने क्यों ऐसी भूल की, इस की कोई सन्तोषजनक मीमांसा वे नहीं कर सके। रामसुन्दर में जैसी श्रद्धा, भक्ति देखी थी, उस से वह ठगता होगा, इस का ख़याल भी उन के मन में नहीं हुआ।

दूसरा परिच्छेद ।

रामसुन्दर के परिचय के लिये अब अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। इस उपन्यास के निमित्त जो जानना आवश्यक है, वह पूर्व परिच्छेद ही में कह दिया गया। कृपालपुर में इन का मकान है। ये दो भाई थे, बड़े भाई श्यामसुन्दर मकान पर रहते थे। रामसुन्दर नारायणपुर की ज़मींदारी कचहरी में तहसीलदारी का काम करते थे। ये उत्तम श्रेणी के राजपूत नहीं थे, बलिया जिले में राजपूतों का आदर थोड़ा नहीं है। उच्च श्रेणी के राजपूत अधिकांश प्राचीन राज-वंश के उत्पन्न हैं, अथवा राजवंश से उन का सम्बन्ध है। वे समय के फेर से इस समय दरिद्र हो गये हैं। यही कारण है कि अब वे वैसे गण्य-मान्य नहीं रहे। किन्तु इन के पूर्व्व पुरुष बलिया के वर्त्तमान कई सम्भ्रान्त वंश के पूर्व-पुरुषों की अपेक्षा अत्यन्त क्षमताशाली और सम्मानित थे। रामसुन्दर की श्रेणी के राजपूत विशेष सम्मानित न होने पर भी साधारणतः नौकरी ही करते हैं। ये अपने हाथ से हल नहीं चलाते। रामसुन्दर प्रभृति को भी खेत कम नहीं था।

हरिहर के जाते ही रामसुन्दर ने गोपाल को बुलाया। गोपाल का नाम पाठकों ने एक बार और सुना है। गोपाल एक राजपूत-स्त्री के गर्भ की वर्ण-संकर सन्तान है। गोपाल नारायणपुर में रामसुन्दर का नौकर और रसोइयादार था। रामसुन्दर ने उसे साधारणतः लिखना पढ़ना भी सिखाया है। जब वहां से नौकरी

छोड़ कर आने लगे, तो रामसुन्दर, गोपाल को भी अपने साथ लेते आये थे। गोपाल के आने पर रामसुन्दर ने चारों ओर देख, अन्य किसी को न पा, कहा—"कुछ सुना है?"

गोपाल—जी नहीं।

राम०—बाबा जी की मालगुज़ारी को चौथिया दिया है। १७।≡) की जगह ४।–)॥। कर दिया है। इस समय कुछ रसीद चाहिये। वे साल साल अपनी मालगुज़ारी ले जाते हैं। कुछ ऐसी रसीद बनाओ, जिस से मालूम हो कि ४।–)॥। ही मालगुज़ारी लगती है, मेरे पास बहुत पुराना कागज़ है। यह काम तुम से जैसा अच्छा होगा, वैसा और किसी से होने का नहीं।

गो०—अच्छा! मैं सब ठीक कर दूंगा, यह कोई बड़ी बात नहीं है!

राम०—एक पट्टा भी लिख-लिखा कर ठीक रखना चाहिये। उसी रामयादव मिश्र के नाम से यही ४।–)॥। मालगुज़ारी का एक पट्टा तैयार कर सको, तो बड़ा काम हो।

गो०—नहीं क्यों कर सकूंगा?

राम०—देखो, पट्टा तैयार कर सको तो अच्छा ही है, नहीं तो रसीद ही से मैं अपना काम निकाल लूंगा। इस बार वह ज़रूर नालिश करेगा। इतनी कम मालगुज़ारी लेने के लिये कभी राज़ी नहीं होगा। अदालत में बीस वर्ष की रसीद देखाने ही से काम हो जायगा; किन्तु जब तक वह लौट कर आता है, उस के पहले ही रसीदें तैयार हो जानी चाहियें। दस पन्द्रह दिन से पहले वह लौट कर न आवेगा, तुम कल ही से उस काम में लग जाओ।

गो०—बहुत अच्छा।

राम०—नाम, गांव वगैरः सब वही रहेगा, केवल मालगुज़ारी का अंक बदल देना होगा।

गो०—हां, सब समझ गया, कल ही से उस में हाथ लगाऊंगा।

राम०—अहा, आइये, किधर से कृपा हुई है?

गांव के पुरोहित देवशरण शर्म्मा आ पहुंचे हैं, रामसुन्दर ने दूर ही से उन्हें देख, उक्त प्रकार से अभ्यर्थना की और पुरोहित के पास आने पर उन की पद-धूलि शिर पर रख, बैठने के लिये उन्हें आसन दिया। माला फिर खड़खड़ करती हुई कुछ शीघ्रता से चलने लगी।

देवशरण ने कहा—"मैं लाला के यहां गया था, सोचा कि अब इधर ही से ज़रा होता चलूं।"

राम०—आना ही चाहिये। बिना आप जैसे ब्राह्मणों के पांव की धूलि गिरे, हम लोगों की कुटी पवित्र होने वाली नहीं।

शर्म्मा—आज कल कामों की बड़ी भीड़ रहती है। लाला और आप के यहां दिन में एक बार आना ज़रूरी काम है।

राम०—कहिये, लाला साहब आज कल कैसे हैं?

शर्म्मा—वे तो अब जन्म रोगी से हो गये हैं। खाना तो अब उन्हें पचता ही नहीं।

राम०—उन का लड़का मकान पर है या नहीं?

शर्म्मा—हां, कल आया है। वह भी तो एकदम बिगड़ गया। हिन्दू-धर्म में अब उस की आस्था नहीं। कहीं की एक विधवा से

वह अपनी शादी करने के लिये आकाश पाताल एक कर रहा है। कलिकाल न है—जो न हो जाय! "नास्ति धर्मः कलौ काले।"

राम०—हा भगवन्! धीरे धीरे क्या क्या न देखना पड़ेगा! सौभाग्य से भाई साहब की लड़की शादी होने के पहले ही मर गयी, नहीं तो दामाद के इस आचरण को देख कर वे फांसी लगा कर आत्म-हत्या कर लेते।

शर्म्मा—ठीक कहते हैं। उनके समान हिन्दू-धर्म के मानने वाले इस समय बहुत कम हैं। देवता और ब्राह्मण में उनकी अपूर्व भक्ति थी, सामने का कहना तो खुशामद समझी जायगी; पर आप उन से बढ़े चढ़े हैं।

राम०—(सलज्ज भाव से हाथ जोड़ कर) जी, आप के आशीर्वाद और पांव की धूलिके बल से जो न हो। आज कल ऐसा समय आ गया है कि हिन्दू के लड़के हिन्दुओं के आचरण को छोड़ना अपना गौरव समझते हैं।

शर्म्मा—यह तो होगा ही, आप बहुत ठीक कहते हैं। खोजने पर इस समय कितने पक्के हिन्दू मिलेंगे? वही लालासाहब का जो लड़का है—वह कहता है कि थोड़ी उमर में जो विधवा हो जाय, उसके साथ विवाह करने में कोई दोष नहीं है। उसी के यहां कितने धूमधाम से भगवान् की पूजा होती थी। प्रति एकादशी के दिन गांव के ब्राह्मणों को फलाहार कराया जाता था; कौन ऐसा दिन होगा कि उस के यहां एक दो ब्राह्मण नहीं खाते थे, अतिथियों के लिये तो उस के यहां किसी ने 'नहीं' कहना सीखा ही नहीं था। अब देखिये, उसी घर के लड़के का यह विचार!

राम०—अंगरेज़ी पढ़ते ही धर्म के प्रति लड़कों की श्रद्धा नहीं रहती। मेरे भी तो वे कलकत्ता गये थे, भगवान् जानें कि वहां से क्या हो कर आये हैं!

शर्म्मा—आप के लड़के वैसे कभी नहीं हो सकते। आप तो अपने लड़के पर कड़ाई करते हैं। जब से लाला साहब की स्त्री मरी है, तभी से उन का लड़का बिगड़ गया है। उन्हें वही तो एक लड़का है, मारे दुलार के उसे मिट्टी कर दिया है, कभी ज़रा सी कड़ी बात तो कहते ही नहीं!

राम०—उस का फल वे स्वयं भोगते हैं।

शर्म्मा—यह तो होगा ही—आप के लड़के का वैसा होना असम्भव है।

राम०—मेरा लड़का वैसा होगा, तो मैं उस लड़के का मुख देखूंगा?—लाला साहब आस-पास के गांवों में जाने-माने जाते हैं, बूढ़े आदमी ठहरे, हमलोगों का उन्हें उपदेश देना शोभा नहीं देता। लड़के पर जरा सी दृष्टि रखने से, एकबार डांट देने से, लड़का तो लड़का ही है, उस की सात पीढ़ी तक सुधर जाय!

शर्म्मा—आज कल के लड़के ऐसे नालायक होते हैं, जिस का कुछ ठिकाना नहीं। लाला साहब एक दिन भी अपने लड़के को एक भी कड़ी बात नहीं कहते। कहें कैसे? मानते जो बहुत हैं। पर एक बात उस में है। लड़का पितृ-भक्त है, और पढ़ने लिखने में मन देता है, इसी उमर में बी. ए. पास कर गया।

राम०—उस की अच्छाई में कोई सन्देह नहीं, उसे तो जान बूझ कर लाला साहब ने ही ख़राब किया है। जिस की ब्राह्मण में

भक्ति नहीं, उस लड़के को तो नदी में फेंक देना चाहिये। कुछ लोगों की राय थी, कि अब मैं अपनी लड़की की शादी उसी लड़के से कर दूं। क्योंकि शादी हो जाने से, उन के साथ मेरा सम्बन्ध हो जाता। ऐसी शादी न हुई, वही अच्छा हुआ।

शर्म्मा—अच्छा, सन्ध्या का समय हो गया, अब मैं चलता हूं।

राम०—हां, हां, अवश्य जाना चाहिये। अच्छा, प्रणाम।

शर्म्मा जी चले गये।

—०—

तीसरा परिच्छेद।

देवशरण शर्म्मा के जाते ही रामसुन्दर के चपरासी अबदुल शेख़ ने खोभाड़ी नाम के एक आसामी को उन के सामने हाज़िर किया। खोभाड़ी एक दुबला पतला बूढ़ा अहीर है। रामसुन्दर के मकान से उस का मकान आध माइल की दूरी पर है। वह रामसुन्दर ही की ज़मीन में रहता है, और उन से समय समय पर कुछ ऋण भी लेता है, आज से पांच वर्ष पहले इसने रामसुन्दर के बड़े भाई से चार मन जव ऋण लिया था। अब तक वह उस के बदले १२ मन जव दे चुका है; किन्तु रामसुन्दर के हिसाब से अब तक उस से १८।१५ अट्ठारह मन पन्द्रह सेर और पाना है। वही मांगने के लिये खोभाड़ी की बुलाहट थी। खोभाड़ी की दशा बड़ी शोचनीय है, उस का एकमात्र लड़का कलकत्ते में नौकरी करता था, आज छः महीने हुए कि हैजे से वहीं पर अकस्मात् उस की मृत्यु हो गयी। खोभाड़ी और उस की वृद्धा स्त्री के दिन बड़े कष्ट

से कट रहे थे। खोभाड़ी को सामने देखते ही रामसुन्दर ने कहा—"क्यों खोभाड़ी! जव के विषय में क्या कहते हो?"

खो०—क्या कहूं, अब मुझ से देना पार नहीं लगेगा। जो दिया है, उसी से मेरी जान बकस दीजिये!

राम०—बकस फकस मैं नहीं जानता। साफ़ साफ़ कहो, सीधी तरह से दोगे या नहीं?

खोभाड़ी—देने की औक़ात रहती, तो ज़रूर देता। मेरा लड़का जीता रहता, तो आप जो कहते, वही मैं आप के सामने ला रखता।

राम०—जो कहते इस से क्या मतलब? क्या मैं तुम से भीख मांग रहा हूं? चार डेढ़ छः, छः डेढ़ नव, नव डेढ़ साढ़े तेरह। साढ़े तेरह डेढ़ सवा बीस। सवा बीस डेढ़ हुआ तीस मन पन्द्रह सेर। इस में वसूल है केवल बारह मन, अट्ठारह मन पन्द्रह सेर बाक़ी है। तुम्हारी हालत अच्छी नहीं है, तो तुम्हारे लिये पन्द्रह सेर छोड़ देता हूं। अट्ठारह मन के विषय में क्या कहते हो?

खो०—अट्ठारह मन के बदले अट्ठारह सेर भी मैं देने में समर्थ नहीं हूं।

राम०—साला, बदमाशी सूझी है! अबदुल, चाहे जैसे हो, इस बदमाश से जव वसूल करो। अभी जव वसूल करो!

अन्त के दो चार शब्द रामसुन्दर के मुख से व्याघ्र गर्जने के समान निकले। उसके साथ ही ज़रा स्वर को नरम करके, मुख बना के कहा—"बेटा मर गया है! बेटा मर गया है, तो खाना पीना क्यों नहीं छोड़ देते? संसार में और किसी का बेटा मरता है! इन्हीं का तो एक बेटा मरा है!"

थोड़ी ही देर में अबदुल प्रभु की आज्ञा पालन करने के लिये अग्रसर हुआ। जिन्हें भारत के दिहातों से कुछ भी जानकारी होगी, वे ही समझ गये होंगे कि वसूल करने का क्या मतलब है?

जो अत्यन्त निर्दयी होता है, वही अत्याचारी ज़मींदार या महाजन का चपरासी या प्यादा होता है। भले आदमी होने पर वे इस प्रकार के आदेश का अर्थ न समझ सकने के कारण स्वयं स्वामी से ठोके जाते हैं। अब्दुल इस श्रेणी का नहीं है। ज़मींदारी कचहरी में, वह बहुत दिन तक रामसुन्दर के साथ रह आया है। इसको काम का आदमी समझ कर ही रामसुन्दर अपने साथ ले आये थे। प्रभु का सिंह-नाद सुनते ही उस ने खोभाड़ी को मारना आरम्भ किया।

यह हम पहले ही कह आये हैं कि खोभाड़ी एक दुबला पतला आदमी है। उस को दमे की बीमारी थी। भला, अब्दुल के हाथ की चोट वह कैसे सह सकता है? दो एक लप्पड़ लगते ही बेचारा चिल्लाने लगा। रामसुन्दर ने आज्ञा दी—"साले को सामने से अलग हटाओ। तालाब पर ले जाओ, अभी बात कहते जब वसूल हो जायगा।"

अब्दुल तुरत उसे वहां से ले गया, और तालाब में गर्दन भर जल में उसे खड़ा किया। उस समय सन्ध्या हो गयी थी। फागुन महीने का प्रथम सप्ताह है, इस लिये अभी शीत पूरा है। बूढ़ा खोभाड़ी थरथर कांपने लगा, और बीच बीच में उसी दारिद्र्य दुःख हारी भगवान् को पुकारने लगा। एक दो वार उस ने अब्दुल से प्रार्थना पूर्व्वक कहा था—"मेरे घर इस की ज़रा ख़बर दे दो।"

अब्दुल ने उस पर ध्यान न दे कहा—" साले, जव देने का इन्तज़ाम करो। अभी कहो, कि मकान पर जाकर गाय, गोरू जो होगा, वह सब बेंच बांच कर जव का दाम मैं अदा कर दूंगा, तो मैं जाकर मालिक से कहूं।"

खो०—अच्छा, मकान पर एक तो गाय ही है, उसे ही बेंच कर जव अदा करूंगा। अब यह दुःख नहीं सहा जाता।

इसी समय खोभाड़ी की स्त्री वहां आ पहुंची। अब्दुल खोभाड़ी को कुछ दिन रहते ही उस के मकान से पकड़ लाया था। देवशरण शर्म्मा के रहने के कारण उस समय रामसुन्दर के सामने उसे नहीं ले गया। सन्ध्या हो गयी; पर अब तक स्वामी को घर आया न देख, वृद्धा रामसुन्दर के मकान की ओर चली। रास्ते में उसे ख़बर मिली कि रामसुन्दर की आज्ञा से खोभाड़ी मार खा कर तालाब में खड़ा किया गया है। इस ख़बर को सुनते ही बुढ़िया के होश पैतरे हो गये। वह एक सांस से तालाब की ओर दौड़ी। उस समय रामसुन्दर अपने बैठक में बैठ कर माला खटखटा रहे थे। खोभाड़ी की स्त्री ने तालाब पर जाकर अबदुल से कहा—" बेटा, मेरे बुढ़वे को छोड़ दे, मैं मालिक से चलकर कहती हूं।"

अबदुल यह क्यों सुनने लगा? बुढ़िया अपने स्वामी को तालाब से निकालने चली, तो अबदुल ने बड़ी कठोरता से उसे जता दिया कि ऐसी चेष्टा करने से उसको भी अपमानित होना पड़ेगा।

रमणी उपायान्तर न देख रामसुन्दर के पास दौड़ी गयी, और उन के चरण के पास बैठ कर रोती २ बोली—"क्या यही विचार है मालिक ? बूढ़ा तो अपने ही दमे से मर रहा है। जो कुछ शरीर में था, वह भी लड़के के मरने से अब जाता रहा। ऐसे आदमी को इस समय तालाब में खड़ा कराया है ?"

राम०—अलग ही रह, अलग ही। मुझे छूएगी क्या ?

खो० स्त्री—मेरे बुढ़वा को छोड़ दो।

राम०—जव देने पर ही उस की रिहाई होगी।

खो० स्त्री-क्या जव देने की हमारो औकात है ?

रमणी ने इसवार रामसुन्दर का पांव पकड़ना चाहा। राम सुन्दर ने अलग हट चिल्लाकर कहा—"बड़ी हराम जादी है।"

खोभाड़ी की स्त्री ने आंख के आंसू पोंछते २ कहा—"मालिक ! बुड्ढे की जान बकस दो, अब वह नहीं बचेगा।"

राम०—मेरा जव ला दे।

खो० स्त्री—कहां जव पाऊंगी ? बेटा, राम शरण, एक बार उठ आओ।

वृद्धा मृत पुत्र को उद्देश्य कर रोने लगी।

राम०—हरामजादी ने फिर रोना आरम्भ किया। इच्छा हो, तो गाय गोरू देकर जव का दाम अदा कर बुड्ढे को छुड़ा ले जाओ।

खो० स्त्री—बस, वही एक गाय ही तो है, आप उसीको लेकर खुश होना चाहते हैं, तो ले लीजिये।

राम०— खुश क्या ? मैं तुम्हारे यहां भीख मांगने जाता हूं ?

खो० स्त्री—मालिक! गाय खोलवा मांगिये, बुड्ढे को अब तालाब में से निकालने की आज्ञा दीजिये।

अब अबदुल को आज्ञा मिली कि—"खोभाड़ी को जल से निकाल लाओ।"

वृद्धा स्वामी के पास दौड़ी गयी, और खोभाड़ी के तालाब से निकलने पर अपने अञ्चल से उस के समूचे शरीर को पोंछने लगी। खोभाड़ी की देह पर जो कपड़े थे, उन के साथ ही अबदुल ने उसे जल में डाल दिया था। बुड्ढा गीला कपड़ा पहने रहेगा, तो उसे कठिन दुःख होगा, इस बात को सोच कर उस की स्त्री कुछ दूर, जहां लोगों की आंख का ओट था, जाकर अपनी धोती का एक हिस्सा पहन लिया, और किसी प्रकार अपनी लज्जा निवारण कर, शेष अंश फाड़ लिया। खोभाड़ी के कपड़े हटा, उस सूखे कपड़े के पहनाने से भी उस का जाड़ा दूर नहीं हुआ। वृद्धा इधर उधर से कुछ सूखी पत्तियां इकट्ठी कर लायी, और उन्हीं में आग लगा कर स्वामी के शरीर को गरम करने का प्रयत्न करने लगी।

खोभाड़ी के बैठने पर उसकी स्त्री ने उस के अङ्ग को स्पर्श कर पूछा—" कहां मारा है?"

खोभाड़ी ने रोते २ जहां २ चोट लगी थी, उन २ जगहों को दिखला दिया। बुड्ढी अपने हाथ से उन २ स्थानों को सोहराने लगी।

बुड्ढी स्वामी की सेवा में इस प्रकार लगी थी, कि उसे अपनी गाय की बात कुछ भी नहीं याद रही। सहसा रामसुन्दर के एक

नौकर ने आकर कहा—" तुम लोगों की गाय मैं ले आया हूं, जव का दाम अब सब वसूल हो गया। "

अब वृद्ध दम्पती का माथा ठनका। गाय को वे अपने प्राण सी मानते थे। ये जिस गृह में शयन करते थे, उसी गृह के एक कोने में गाय भी रहती थी। गैय्या को एक पांच सात महीने का बछवा था। उसे भी वह गाय के साथ लिये आया था। खोभाड़ी की स्त्री सन्ध्या हो जाने पर गाय को घर में बांध, जिस में उसे मच्छड़ न सतावें, इस लिये धूंआं भी कर आयी थी। इस समय यहां से जाकर गृह का वह हिस्सा शून्य दिखाई पड़ेगा। बुढ़िया एक क्षण में इन सब बातों का ख़याल कर रो उठी। थोड़ी देर के बाद, यह सोच कर कि रोने से कुछ लाभ नहीं है, बुड्ढे स्वामी को साथ ले राम सुन्दर के सामने आयी।

गाय प्रति दिन पांच सेर दूध देती है। उसी का मूल्य अट्ठारह मन जव के मूल्य की अपेक्षा अधिक हो जाता है। किन्तु सहज ही में यह बात तय पा गयी कि अट्ठारह मन जव के बदले यह गाय जायगी। खोभाड़ी या उस की स्त्री—किसी ने कुछ मीन-मेख नहीं किया।

खोभाड़ी ने स्त्री से कहा—" अब देर क्यों करती है? चलो, घर चलें।"

खोभाड़ी की स्त्री उठी, और ओस से भींगी थोड़ी सी दूब लाकर गाय के मुख में दिया। थोड़ी देर तक उस के कान, मुख, खुर प्रभृति अपने हाथ से सोहराती रही, और बछवे के शरीर पर भी हाथ दिया। निदान रोते २ कहा—माता, इतने दिन तक

मेरे घर रही। आज तुझे बिदा कर दिया। लड़के के मरने के बाद से तूही हमलोगों को खिला-पिला कर जिलाती थी। तेरे दूध को बेच कर चावल ख़रीदती थी। तेरे गोबर की गोहरी बना कर उसी से भात पकाती थी! इतने पर भी तुझे कई बार मारा है, कई बार अनादर किया है—इन सब का ख़याल मत करना, मेरे इस अन्तिम भोजन दूब को एक बार खालो।

पुत्र के शोक से दग्ध दरिद्र-दम्पती हत-सर्वस्व हो अपने घर की ओर चले। रजनी के धुंधले प्रकाश से जहां तक दृष्टि काम करती थी, वहां तक गाय कातर आंखों से उन की ओर देखती रही।

पशु! तुझे भी प्राण है! किन्तु मनुष्य कैसे प्राण-हीन हुए, यही हम नहीं समझ सके।

चौथा परिच्छेद।

राम सुन्दर की भाभी अपने मैके हैं। उनको एक मात्र कन्या थी। कन्या जब से मरी है, तब से इनका मन संसार में नहीं लगता। राम सुन्दर के मकान पर इस समय, राम सुन्दर की स्त्री, एक पुत्र और एक कन्या है, लड़का बड़ा है। कन्या छोटी है। बूढ़ी खोभाल्ली के ऊपर जो अत्याचार हुए थे, राम सुन्दर की स्त्री को उस की ख़बर लग गयी थी। वे रामसुन्दर के उपयुक्त सहधर्मिणी नहीं थीं। स्वभावतः हिन्दू ललनाएँ जैसी होती हैं, राम सुन्दर की स्त्री भी वैसी ही थीं। वर्त्तमान-शिक्षा उन्हें नहीं मिली थी; किन्तु हिन्दुओं के घर, गृहस्थी चलाने की उन्हें शिक्षा मिल गयी थी।

पुत्रवती रमणी के हृदय में पर-दुःख-कातरता कूट २ कर भरी थी। इसी से खाभाड़ी के ऊपर जो अत्याचार किया गया था, उसे सुन कर उनके हृदय में बड़ी गहरी चोट बैठी थी।

भीतर मकान में जाकर राम सुन्दर ने जब भोजन कर लिया, तब वे धीरे २ कहने लगीं—"क्यों जी, मैं ने सुना है कि आज इस गांव के एक बुड्ढ़े बेचारे ग़रीब को बुला कर मार खिलायी गयी है, क्या यह सत्य है?

राम०—तुम्हारे पास यह सब समाचार कौन पहुँचाता है?

स्त्री—कोई पहुँचावे, इस से क्या! सचमुच उस को अबदुल ने मारा है?

राम०—तुम्हें इन सब बातों से क्या काम? जाओ खा आओ।

स्त्री—जबतक कहोगे नहीं, तबतक मैं खाने नहीं जाऊंगी।

राम०—हां, मारा है तो इस से क्या! उस के यहां मेरा जब बाकी था, वह देने में 'नाहीं' कर रहा था, इसी से उसने उसपर कड़ाई कर जब वसूल किया है।

स्त्री—इसी को कड़ाई करना कहते हैं? बेचारे गरीब को इस जाड़े की रात के समय जल में खड़ा किया था!

राम०—नहीं खड़ा किया जाता, तो सात जन्म में भी उससे जब वसूल नहीं होता।

स्त्री—फिर उस जब को वसूल करने की ज़रूरत ही क्या पड़ी थी?

राम०—इस के विषय में जब तुम से मैं राय लेने जाऊं तब राय देना। इस समय जाओ, खाकर सो रहो।

स्त्री—मेरे खाने और नहीं खाने से कोई हर्ज नहीं। तुम इस प्रकार किसी को अब नहीं सता सकोगे। इस से मालूम होता है कि नारायणपुर की कचहरी में भी तुम इसी प्रकार लोगों को मारते थे।

राम०—मारता था, तो इससे क्या ?

स्त्री—जब मारते थे, तब मारते थे; पर अब मत मारना। ग़रीब दुःखी जीवों के सताने से उनका रोआं शाप देता है, और उन के सतानेसे परमात्मा भी नाराज़ होते हैं।

राम०—अच्छा, अपनी यह पण्डिताई यहां से अलग ही रखिये, स्त्रियों के मुख से शास्त्रोपदेश शोभा नहीं पाता।

स्त्री—मैं शास्त्र-पुराण की बातें नहीं कहती। मैं अपने मन की बात कहती हूं। परमात्मा ने अपने को बाल-बच्चा दिया है। दूसरे के मन को दुःख नहीं देना चाहिये। दीन-दुःखियों के इतना सताने से यह सब पूजा-पाठ जप-तप झूठ हो जाता है।

राम०—झूठ होता है कि सत्य होता है, यह मैं भलीभांति समझता हूं। तुम्हें इस प्रकार से बढ़ बढ़ कर बोलने की ज़रूरत नहीं। स्त्रियों को तो खा-खिला कर अपना चुपचाप बैठे रहना चाहिये, जाओ—

राम सुन्दर चटख़ गये थे। स्त्री ने पहले की अपेक्षा कुछ स्वर नरम कर कहना आरम्भ किया—"मैं तुम से कभी बढ़ बढ़ कर बोलती हूं ? पर उस बुड्ढे, बुढ़िया के पास अब कुछ रहा नहीं, जो

एक गाय थी, उसी से उन बेचारों का पेट पोसाता था, उसी को तुम यहां ले आये हो।"

राम०—नहीं लाता तो जव कैसे वसूल होता ?

स्त्री—ऐसे आदमी के यहां जव छोड़ ही देते तो क्या हानि थी ?

राम०—तुम में जब इतनी दया है, तो क्यों नहीं, उसके बदले तुम्हीं ने जव का दाम दे दिया, वे अपनी गाय-बछवा लिये रहते ?

स्त्री—क्या वह दाम मैं दे दूं, तो उन की गाय तुम उन्हें लौटा दोगे ? यदि कहो, तो मैं अभी रुपये गिन दूं।

राम०—कहां से रुपये दोगी ? जो रुपया दोगी, क्या वह मेरा नहीं है ? शायद इन रुपयों के लिये दूसरा है ?

रामसुन्दर ने एक जघन्य शब्द का प्रयोग किया—स्वामी की अन्तिम बात सुन सरल रमणी रो उठी। फिर उत्तर देने की क्षमता नहीं रही। वे मन ही मन ईश्वर को पुकारने लगीं, और कहने लगीं—" जगदीश्वर, मेरे स्वामी को सुबुद्धि दो। इन्हें ऐसी बुद्धि दो कि किसी जीव पर ये अन्याय, अत्याचार न करें।

क्षण भर के बाद आर्त्त-स्फुट स्वर से अन्यमनस्क भाव से बोली, " इस गाय का दूध मैं अपने लड़के, लड़कियों को नहीं दूंगी।"

रामसुन्दर ने अवसर देख उत्तर दिया, " मत देना। वह दूध मैं ठाकुरबाड़ी और अतिथि सेवा में खर्च करूंगा।"

गृहिणी ने उस रात को भोजन नहीं किया। रात को उपवास नहीं रहना चाहिये, इसी से उनने कुछ ज़रा सा मुंह में लगा कर

जल पी लिया। दूसरे दिन प्रातःकाल, घर के काम-काज से छुट्टी पा उनने खोभाड़ी की स्त्री को बुला भेजा, और बुड्ढी के आने पर नाना उपायों से उसे प्रसन्न करने की चेष्टा करने लगीं। जब इन्हें यह मालूम हुआ कि खोभाड़ी की स्त्री को कपड़ा नहीं है, तब उन ने उसे एक काम लायक पुराना कपड़ा दिया। साथ ही कुछ चावल, दाल और तरकारी दे कहा—"माता, तुम मेरी मा की उमर की हो। जो कुछ हम लोगों से अपराध हो गया है, उसे क्षमा करो। और मेरे लड़के, लड़कियों को कुछ न कहना, जब तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत हो, तो मेरे यहां आना। मुझ से जो बन पड़ेगा, उठा न रक्खूंगी। गोपाल और अबदुल इन दोनों ने ही उन्हें ऐसा बना दिया है। जब से ये दोनों उन के साथ आये हैं, तब से न मालूम कौन कौन सा काम कराते हैं।

"उस अबदुल का नाम मत लो।" इतना कह कर बुढ़िया रो पड़ी। और अपने शरीर के फटे-पुराने कपड़े को दिखला २ कर पूर्व रात्रि की घटना एक एक कर के कहने लगी। रामसुन्दर की स्त्री ने उस को बड़ी देर तक बैठा, अनेक बातों से बहला, प्रसन्न कर घर भेजा।

पांचवां-परिच्छेद

इधर दूसरे ही दिन रामसुन्दर ने गांव के पुरोहित देव शरण शर्म्मा को बुलाकर सत्परामर्श की अवतारणा की। इस समय गांव में एक दो आदमियों को चेचक की बीमारी हुई थी। राम

सुन्दर ने कहा—"मेरा विचार है, कि शीतला माता की पूजा की जाय तो अच्छा है। गांव के सब लोगों से कुछ २ चन्दा इकट्ठा कर पूजा का प्रयत्न किया जाय ; पर पूजा का सब भार आप ही पर रहेगा। जिसमें पूजा सर्वाङ्ग सुन्दर हो, ऐसा काम कीजियेगा। रुपये के लिये सोच-विचार करने की ज़रूरत नहीं। गांव के लोग जितना देंगे, सो तो देंगे ही और जितना घटेगा, वह सब मैं अपने पास से दूंगा।"

शर्म्मा जी ने कहा—"यह आप का अत्युत्तम-प्रस्ताव हुआ है।"

राम०—देवता, देवी की पूजा करना ही तो हिन्दुओं का कर्तव्य है, और देखिये, मेरा विश्वास है, कि यह सब जो अमङ्गल बेरामी हेरामो होती है, वह सब देवता ही के कोप से। बिना उन के कोप को शान्ति का उपाय किये, और सब उपाय व्यर्थ हैं।

शर्म्मा—सरकार, बहुत ठीक कहते हैं। आजकल इन सब बातों का ख़याल बहुत कम लोगों को होता है।

राम०—आपलोगों के आशीर्वाद से सारी उमर तो विदेश ही में कट गयी। इस समय मकान पर आया हूं, यहां बिना कुछ धर्माचरण किये मन नहीं मानता है। पापी मुख से पहले कहना तो अच्छा नहीं मालूम पड़ता; पर विचार किया है कि इसवार वैशाख के महीने में (माला शिर पर रख कर) भगवान् सत्यनारायण की कथा कहवाऊंगा। समय ऐसा बुरा आ गया है कि अब कथा वथा का कहीं नामोनिशान नहीं सुन पड़ता, किसी ने विपत्ति में पड़कर कभी भगवान् सत्यनारायण की कथा सुनने की मनौती भी मानी, तो वह इस प्रकार लुक छिप कर कथा सुनते हैं कि जिस

से शायद स्वयं भगवान् सत्यनारायण को भी इस की खबर नहीं लगती हो तो कुछ आश्चर्य्य नहीं। भगवान् का नाम सुनते ही लोगों की नानी मर जाती है।

देवशरण०—श्रीमान् ने बड़ा साधु संकल्प किया है। वैशाख के महीने में कथा सुनने और ब्राह्मण खिलाने की बड़ी महिमा शास्त्रों में लिखी है।

राम०—जी हां, इसका भी विचार है, बारह अच्छे ब्राह्मणों को लगातार पांच छ दिन तक खिलाने का विचार है। संसार में यही तो सार है। मनुष्य को यही करना चाहिये। यों तो कौन नहीं कमाता खाता है? पशु, पक्षी भी तो अपना पेट भर लेते हैं।

शर्म्मा—साधु साधु! पुण्य मास में नित्य ब्राह्मण भोजन और भगवद्-गुण-कीर्त्तन। वाह! इससे बढ़ कर अब क्या हो सकता है?

राम०—पर इन सब का भार आपही के ऊपर रहेगा।

शर्म्मा—कोई हर्ज नहीं। मैं ही क्यों? गांव के सब लोग देखें सुनेंगे।

राम०—वह तो होगा ही। दिहात का तो यह नियम ही है। एक आदमी कोई एक काम आरम्भ करे, तो दस आदमी लग कर उस में काम करते हैं; ठीक इस प्रकार काम करते हैं, मानो वह उन का अपना हो। बड़े २ शहरों में यह आराम नहीं। वहां तो दूसरे के यहां जाकर काम काज करने में लोग अपना अपमान समझते हैं।

शर्म्मा—ठीक कहते हैं; पर दिहात की भी धीरे २ अब वही हालत होती जाती है।

राम सुन्दर और देवशरण शर्म्मा में इसी प्रकार की बातचीत चल रही थी, इसी समय गांव के त्रिलोचन दास वहां आ पहुँचे। त्रिलोचन पर गांव के सभी–बुरे से लेकर भले तक–प्रेम करते हैं। त्रिलोचन एक वास्तविक धर्म-परायण हिन्दू थे। त्रिलोचन का प्रचलित नाम था जय शङ्कर, वे जयशङ्कर के आदी थे। किसी शब्द को वे बिना जयशङ्कर का सम्पुट किये बोल नहीं सकते थे।

त्रिलोचन ने आते ही पूछा—" जयशङ्कर, क्या बात हो रही है ? "

शर्म्मा जी ने उत्तर दिया—" राम सुन्दर बाबू सत्यनारायण की कथा सुनेंगे, और साथ ही लगातार चार पांच दिन तक ब्राह्मणों को भी खिलायंगे। दोनों पुण्य कार्य्य पुण्य मास वैशाख में किये जायंगे, वही बात हो रही थी।"

त्रिलोचन ने रामसुन्दर की ओर देख कर कहा—" जयशङ्कर, बाबू साहब कथा सुनें, या ब्राह्मण खिलावें, जयशङ्कर जयशङ्कर जीवों के प्रति दया नहीं रखने से सब मिथ्या है जयशङ्कर।"

राम०—इस का क्या मतलब ? (माला फेरते फेरते)—जय शङ्कर जयशङ्कर।

त्रिलो०—जयशङ्कर सुना है कि कल दमा रोगवाले बेचारे खोभाड़ी को जयशङ्कर जल में खड़ा करवाया था। जयशङ्कर उस समय उस का मन क्या कहता होगा जयशङ्कर ?

राम०—तो क्या इसी से कोई अपना पावना किसी से न ले ?

त्रि०—जयशङ्कर मैं यह नहीं कहता। तो भी जिस की जैसी शक्ति है, जयशङ्कर वह भी देखना होता है। जयशङ्कर दीन दरिद्र

मनुष्य को व्यर्थ में कष्ट देने से पाप होता है जयशङ्कर। जयशङ्कर बुड्ढा बुढ़िया, जब रोने लगे—"

राम०—अपना पावना छोड़ देते तो नहीं रोते।

राम सुन्दर को बात करते हिचकते देख शीघ्र देवशरण ने उन के पक्ष को समर्थन करने के लिये दो एक बातों को कहना आरम्भ किया :—

"उस की यही चाल है। लेने के समय तो खूब गिड़गिड़ाता है, बड़ी २ प्रतिज्ञाएँ करता है; पर देने के समय नानी मरने लगती है। जरा सा हाथ उठाने पर मालूम होता है कि उस पर कितनी मार पड़ रही है, और जरा सी बुरी बात कही जाय, तब की तो बात ही न पूछिये!"

त्रि०—बाबा जी रहने दीजिये जयशङ्कर। खुशामदी टट्टू होना अच्छा नहीं। जयशङ्कर वह खोभाड़ी आप ही का कौन है और मेरा ही उस से क्या सम्बन्ध है? बाबू साहब ही के साथ जयशङ्कर किस को शत्रुता है? तौभी जयशङ्कर विचारना चाहिये कि चार मन जव लेकर बारह मन जव दिया है। जयशङ्कर लड़के के मरने से वह आप मर रहा है, उस पर से बीमारी है जयशङ्कर। एक गाय थी, जयशङ्कर उसी के दूध से बुड्ढे बुड्ढी का जयशङ्कर गुज़ारा चलता था। कल बाबू साहबने उसे भी खोलवा मंगाया है जयशङ्कर। इस समय जयशङ्कर उन दोनों की ऐसी दशा हो गयी है कि उन्हें देख कर पत्थर का भी हृदय रो देता है, जयशङ्कर।

कहना नहीं होगा कि त्रिलोचन की इस बात से रामसुन्दर और साथ ही साथ देवशरण दोनों ही विरक्त हो गये; किन्तु

त्रिलोचन के प्रति लोगों को असीम भक्ति थी। यह सभी जानते हैं कि त्रिलोचन झूठ कहने वाला आदमी नहीं है। देवशरण और रामसुन्दर को उस की बातों का खण्डन करने की हिम्मत नहीं हुई। उन दोनों को अपनी ओर से उदासीन देख, वहां ठहरना अनुचित समझ कर त्रिलोचन वहां से चले गये।

—:o:—

छठा परिच्छेद।

धीरे २ रामसुन्दर का अत्याचार गांव में अप्रतिहत-वेग से बढ़ने लगा। दुर्बल का रुधिर चूस कर वे अपना अर्थ बढ़ाने लगे, खोभाड़ी के समान कितने ग़रीब उन के अत्याचार से निहंग हो गये, उन के विरुद्ध में कौन जीभ खोले? रामसुन्दर जिसे दुर्बल पाते थे, उसी को उत्पीड़न करते थे। संसार में दुर्बलों के लिये बहुत कम लोग रोते हैं। विशेषतः राम सुन्दर गाय मार कर ब्राह्मण को जूता दान करना जानते थे। गांव के अनेक लोग उन के मकान पर आकर उनके कामों में हाथ बंटाते थे और पेट भर कर भोजन पाते थे, इस लिये खोभाड़ी के समान दरिद्र की बात याद आने पर भी कोई उसकी चर्चा नहीं चलाता था। पुलिस चौकी गांव से कुछ दूर था। अदालत, और फौजदारी कचहरी से गांव का एक दिन के रास्ते का अन्तर था। इस से राम सुन्दर को अत्याचार करने की विशेष सुविधा थी। पुलिस कुछ २ पूजा भी पाती थी। इसीसे राम सुन्दर के विरुद्ध कोई चीं चपड़ नहीं करता था।
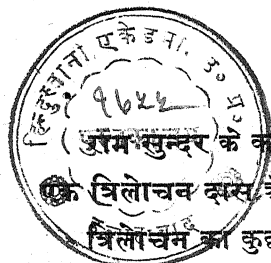
श्याम सुन्दर के कार्य्य का प्रतिवाद करने वाले दो आदमी थे—एक त्रिलोचन दास और दूसरे लाला साहब।

त्रिलोचन का कुछ परिचय पूर्व्व अध्याय ही में पाठकों को मिला है। त्रिलोचन पर गांव के लोगों की बड़ी श्रद्धा भक्ति थी। त्रिलोचन की सम्पत्ति में पचास बीघे जोते की ज़मीन थी। इसी के द्वारा वे अनेक दुःखियों की समय समय पर सहायता करते थे। कोई अतिथि त्रिलोचन के मकान से विमुख नहीं जाता था। गांव में यदि कोई राही एक दो शाम ठहरने की जगह चाहता तो गांव वाले त्रिलोचन का मकान दिखा देते थे। त्रिलोचन के परिवार में इस समय कोई नहीं है, एक उन की स्त्री थी, वह भी मर गयी। उन्हें सन्तति हुई ही नहीं। किन्तु उस प्रान्त के सभी उन के परिवार के से थे। त्रिलोचन एक विश्वस्त नौकर को अपने मकान पर रख कर आप इधर उधर रहते थे, और किसी को दुःखी देख जी जान से उस का दुःख दूर करने का प्रयत्न करते थे। यही कारण है कि खोभाड़ी का समाचार इतना जल्द उन्हें मिल गया। खोभाड़ी अपनी स्त्री के साथ इन्हीं के मकान पर रहने लगा है।

आस-पास के आठ दस गांव के लोग त्रिलोचन का देवता के समान सम्मान करते हैं। यह पहले ही कह आये हैं कि त्रिलोचन साधारणतः जयशङ्कर नाम ही से परिचित हैं। यहां तक कि बालक और अधिकांश युवक उनका जयशङ्कर के भिन्न और कोई नाम है, यह भी नहीं जानते हैं। गांव के बुड्ढे अपने लड़कों को यही शिक्षा देते थे, कि "जयशङ्कर का सम्मान करना।" वे जहां जाते थे, वहीं उन का आदर होता था। लड़के सब से अधिक उन्हें मानते

थे। त्रिलोचन में लड़कों की सी सरलता थी। त्रिलोचन के किसी मकान पर जाते ही कम उमर के लड़के, लड़कियां उन्हें घेर कर बैठतीं, कोई उन का गोद चढ़ता, कोई कन्धे पर चढ़ता। पड़ोसियों के लड़के, लड़कियां प्रायः उन के घर जाकर अनेक प्रकार के अत्याचार करते और चीन्हा लगाते थे। उन के घर को वे अपना ही घर समझते थे। त्रिलोचन की गाय के दूध और पेड़ के फल पर लड़कों का एकाधिपत्य था। सौ बात की एक बात यह है कि त्रिलोचन का कोई शत्रु नहीं था। आस पास के दो चार गांवों में झगड़ा होने पर दोनों दल के आदमी कहते थे—जयशङ्कर जो कहेंगे, वही हम स्वीकार करेंगे। जिस विषय में त्रिलोचन की जानकारी रहती, उस विषय में दोनों दल के आदमी उन्हें अपना गवाह बनाते थे। किन्तु त्रिलोचन गवाही से बड़ी घृणा करते थे। कभी कहीं गवाही देने की सम्भावना रहती तो वे उस समय इधर उधर लुके छिपे फिरते थे। अब तक उन्हें कोई कचहरी तक नहीं ले जा सका है।

त्रिलोचन के खेत में जो रब्बी होती थी, उस से वे अनेक दरिद्रों की सहायता करते थे। जिस साल उन्हें रब्बी अधिक होती थी, उस साल वे प्रायः महोत्सव करते थे। त्रिलोचन के महोत्सव का अर्थ दुःखी और दरिद्रों का भोज था। दुःसमय में जो उन से मांगता था, वह विफल मनोरथ नहीं होता था। ये साधु स्वभाव त्रिलोचन रामसुन्दर के शत्रु (रामसुन्दर की आंखों में) समझे जाने लगे।

पहले ही कह आये हैं कि लाला साहब कुलीन घर के हैं। इस समय अवस्था ख़राब होने पर भी रामसुन्दर की अपेक्षा इन का सम्मान अधिक है। लाला साहब अपने मकान से बहुत कम निकलते थे, इस का कारण उन के स्वास्थ्य की ख़राबी थी। तथापि गांव, घर के कितने ही आदमी उनके मकान पर जा कर उन्हें देख आया करते थे।

जिस दिन सन्ध्या के समय खोभाड़ी पर अत्याचार हुआ था, उस के दूसरे ही दिन इस की ख़बर लाला साहब के कान तक पहुंची। इस के बाद देवशरण शर्म्मा से भेंट होते ही लाला साहब ने इस कार्य्य का प्रतिवाद किया और कहा—"रामसुन्दर बाबू से कहियेगा, ग़रीबों के ऊपर ऐसा अत्याचार न करें। ऐसे आदमियों का शाप बहुत जल्द लगता है।"

देवशरण ने इसी बात को ज़रा फेर-बदल कर दूसरे ही भाव से रामसुन्दर को कह सुनाया था। रामसुन्दर, लाला साहब और त्रिलोचन दोनों की बुराई करने के लिये जी जान से उतारू हुए। सोचा, बिना इन का दमन किये कुशल नहीं। इसी विषय का रात्रिन्दिव परामर्श चलने लगा। रामसुन्दर का हाथ, पैर था गोपाल। रामसुन्दर और गोपाल के परामर्श का जो फल हुआ, उस का पता पाठकों को आगे के कुछ परिच्छेदों से लग जायगा।

सातवां परिच्छेद ।

पहले ही कह आये हैं कि त्रिलोचन गवाही से बड़ी घृणा करते थे । अदालत का नाम सुनते ही उन के देवता कूच कर जाते थे । त्रिलोचन कभी अदालत नहीं गये हैं, पर जिस दिन उनने खोभाड़ी और उस की स्त्री को अपने यहां आश्रय दिया, उस के तीसरे ही महीने उन्हें अदालत जाना पड़ा । जाना भी पड़ा तो गवाही देने नहीं; किन्तु एक मुकद्दमे का प्रतिवादी हो कर । त्रिलोचन के गांव से चार कोस दूर एक गांव से एक आदमी ने उन पर ९००) रुपये की नालिश की है । बलिया की मुन्सिफी में यह मुकद्दमा दायर हुआ है । जिस व्यक्ति ने मुकद्दमा दायर किया है, त्रिलोचन का कहना है कि उस के साथ मेरी कभी की जान पहचान भी नहीं । और मैंने कभी किसी से आज तक एक पैसा भी ऋण नहीं लिया है । मुकद्दमा का समन पाते ही वे बड़े छः पांच में पड़े । उन के मुख से मुकद्दमे का समाचार पा, सभी दंग रह गये । बहुतों ने अनुमान किया कि भूल से इन के नाम समन ज़ारी हो गया है । त्रिलोचन जैसे मनुष्य के नाम कोई मिथ्या मुकद्दमा कर सकता है, इस कल्पना से भी बहुत लोग विस्मित हुए ।

निश्चित दिन त्रिलोचन को बलिया की अदालत में उपस्थित होना पड़ा । त्रिलोचन के मन की धारणा थी, कि मैं जो कहूंगा, विचारक उसी पर विश्वास कर लेंगे । इनका यह भी विश्वास था, कि मेरे नाम से मुकद्दमा ही नहीं है । किन्तु यह विश्वास और धारणा अधिक दिन तक नहीं रही । त्रिलोचन का रुपये लेना और

वादी के साथ परिचय अस्वीकार कर जवाब दाख़िल करने पर भी मुकद्दमा इतने ही पर समाप्त नहीं हो गया, वादी और प्रतिवादी से प्रमाण ग्रहण करने के लिये दूसरा दिन नियुक्त किया गया। त्रिलोचन के वकील ने उन से जब सबूत लाने को कहा, तब त्रिलोचन ने कहा—"इस के लिये अब और सबूत की क्या ज़रूरत है? वही सबूत दे।"

उस दिन पहले वादी और उस के गवाहों का इज़हार हुआ। त्रिलोचन ने देखा, बिना परिश्रम मिथ्या बातें कह उन सबों ने सप्रमाण कह सुनाया कि प्रतिवादी (त्रिलोचन) ने वादी से ७५०) रुपये लिये हैं। वही रुपये सूद मूल लेकर इस समय ६००) रुपये हो गये हैं। दो वर्ष पहले त्रिलोचन एक बार तीर्थ-दर्शन करने गये थे। उनलोगों ने कहा—इसी तीर्थ भ्रमण करने के लिये इन्हें रुपये की आवश्यकता हुई थी, इसी से इनने उस समय ऋण लिया था।

त्रिलोचन यह सब सुन कर अवाक् हो गये। वे तीर्थ भ्रमण करने गये थे सही; किन्तु उस के लिये किसी से एक पैसा भी ऋण नहीं लिया था। वादी की ओर से एक बही निकाली गयी। उस में त्रिलोचन का नाम लिखा था। त्रिलोचन यह देख कर विस्मित हुए कि यह लिखावट ठीक़ उन के हस्ताक्षर के समान है; परन्तु उनने कभी किसी बही पर अपना हस्ताक्षर नहीं किया है। इन सब बातों को सोच समझ कर त्रिलोचन के सारे शरीर में आग लग गयी। जब उनके सबूत देने का समय आया, उस समय वे बेहोश से थे। मनुष्य इतना असत्य बोल सकता है, इस का उन्हें स्वप्न में भी ख़याल नहीं था।

त्रिलोचन से जब प्रश्न हुआ, तब वे कांपते २ कहने लगे-"जय-शङ्कर मेरा नाम त्रिलोचन दास है, जयशङ्कर मेरे बाप का नाम रामजय दास इत्यादि।"

ज़बानबन्दी में भी उन्हों ने कहना आरम्भ किया—"जयशङ्कर मैं वादी को पहचानता ही नहीं। जयशङ्कर मैं किसी से रुपया लेता भी नहीं जयशङ्कर—"

विचारक दो कारणों से त्रिलोचन पर विरक्त हो उठे। एक उनका काम देख कर और दूसरा उनके मुख से 'जयशङ्कर' सुन कर। पहले तो एक दो बार कहा—"साफ़ २ बोलो। जयशङ्कर छोड़ कर बोलो। कांपते क्यों हो?"

किन्तु इतने पर भी त्रिलोचन नहीं सम्भले, 'जयशङ्कर' के वे आदी हो गये थे, उन्हें ऐसा अभ्यास हो गया है कि जयशङ्कर छोड़ कर वे बोल ही नहीं सकते हैं। त्रिलोचन के मुख से जयशङ्कर उसी प्रकार जारी रहा।

थोड़ी ही देर में विचारक का धैर्य्य छूट गया। वे बोले—'अब यदि जयशङ्कर जयशङ्कर बोलोगे तो अच्छा नहीं होगा। क्या तुम सीधी तरह से नहीं बोल सकते हो?"

त्रिलोचन ने जवाब दिया—"क्या करूं हुजूर! जयशङ्कर कहने की मुझे आदत पड़ गयी है जयशङ्कर। और जो कहिये सो सब करने के लिये प्रस्तुत हूं, पर जगत्कर्त्ता का नाम नहीं भूल सकता।"

इस बार हाकिम बिगड़ उठे, बोले—"अब जयशङ्कर जहां कहा कि मुकद्दमे में वादी को डिग्री दे दूंगा।"

त्रिलोचन अब सह नहीं सके, बोले—" जयशङ्कर यदि आप के विचार में यही आवे, तो दीजिये डिग्री जयशङ्कर। जयशङ्कर जब इतना झूठ बनाया है, तब जयशङ्कर आप भी डिग्री देंगे, जयशङ्कर इस में आश्चर्य्य ही क्या है जयशङ्कर।"

त्रिलोचन के इज़हार होने के बाद विचारक ने और किसी गवाह का इज़हार नहीं लिया। मुकद्दमा में उन के प्रतिकूल डिग्री हुई, यह कहना व्यर्थ है। मिथ्या प्रमाण के साथ हाकिम का क्रोध भी इस डिग्री में कुछ सहाय हुआ था, इस में ज़रा भी सन्देह नहीं!

आठवां परिच्छेद।

किसी किसी ने त्रिलोचन को अपील करने की राय दी; किन्तु उन ने किसी की एक न सुनी। त्रिलोचन की संसार में वैसी आसक्ति नहीं थी। उन का संसार दूसरे के लिये था। इस घटना से संसार की ओर से उन के हृदय में वितृष्णा हो गयी। डिग्री के रुपये देने के लिये उन के हाथ पर नक़द कुछ भी नहीं था। त्रिलोचन ने समझ लिया कि इसी रुपये के अदाय करने में मेरी सारी ज़मीन बिक जायगी। संसार से छुटकारा पाने का यह एक अवसर आया देख, उन ने मन ही मन सब खेत-बारी बेंच ही देने का संकल्प किया; किन्तु उन के इस संकल्प से गांववाले अत्यन्त दुःखी हुए।

किस की करतूत से यह सब मर-मामला हुआ है, यह गांव वाले जानने से बाकी नहीं रहे। त्रिलोचन के साथ जितने आदमी बलिया गये थे, उन में एक ने वहां गोपाल को देखा था। गोपाल रामसुन्दर का दाहिना हाथ था। गांव के सब लोगों को यह बात मालूम हो गयी कि रामसुन्दर के षड्यन्त्र से ही यह सब घटना घटी है। त्रिलोचन के प्रति उन का प्रगाढ़ प्रेम था। सभी त्रिलोचन के मुकद्दमे में उन की डिग्री कराने की चेष्टा में थे। इस समय भी उन लोगों ने उन्हें अपने गांव में रखने के लिये कम प्रयत्न नहीं किया। इन में अधिकांश लोगों ने जाकर लालासाहब से त्रिलोचन को रखने का अनुरोध किया; किन्तु त्रिलोचन उदासीन ही रहे, उन ने किसी से कुछ नहीं कहा।

दो मास के भीतर ही डिग्री जारी हुई, और साथ ही साथ त्रिलोचन के खेत, मकान, सभी कुर्क करा लिये गये। क्रमशः नीलाम होने की बारी आयी। लालासाहब के पास रुपये रहते, तो वे त्रिलोचन के खेत और मकान की रक्षा के उपाय अवश्य करते; किन्तु इस समय इन के पास भी रुपये नहीं रहे। गांव के और आदमी प्रायः सभी दरिद्र थे; तथापि लालासाहब का लड़का नीलाम को डाक बोलने गया था।

रामसुन्दर ने डाक बढ़ा कर त्रिलोचन की सारी धन-सम्पत्ति को ख़रीद लिया।

नीलाम से जो रुपये मिले, उस से डिग्रीदार के रुपये भी वसूल हो गये और कुछ त्रिलोचन को भी मिले। त्रिलोचन ने इन रुपयों में से आधे से अधिक तो खोभाड़ी और उस की स्त्री को

दे दिया, और थोड़े से जो बच रहे, वही लेकर आप सदा के लिये गांव छोड़ने की तय्यारी करने लगे। बहुतों ने उन्हें वहां रहने के लिये अनुरोध किया; परन्तु त्रिलोचन किसी प्रकार वहां रहने के लिये तय्यार नहीं हुए। उन ने कहा—" अब, जब कि एक दो अतिथि के अपने यहां जयशंकर आने पर उन की खातिर जयशंकर नहीं कर सकूंगा, तब जयशंकर अब घर में मुझे रहने की क्या ज़रूरत है जयशंकर? जयशंकर अब मेरा यहां रहना उचित नहीं है। '

त्रिलोचन जिस दिन गांव छोड़ रहे थे, उस दिन उन के मकान पर एक अपूर्व दृश्य था। गांव के आबाल-वृद्ध-वनिता प्रायः सभी उन्हें देखने आये थे। आस पास की एक दो जगहों के भी दो चार आदमी उन से भेंट करने आये थे। त्रिलोचन के मकान पर लोगों की भीड़ से तिल रखने तक की जगह नहीं थी। किसी आत्मीय को बिदा करते समय घर के लोगों की जैसी दशा होती है, उस गांव वालों की भी उस समय ठीक वही दशा थी। त्रिलोचन सभी के आत्मीय थे, सभी लोग उन के पारिवारिक थे। हां, रामसुन्दर अवश्य इन सब लोगों से भिन्न थे।

इस संसार में पुरुष की अपेक्षा स्त्रियों का हृदय अधिक कोमल होता है। जयशंकर अब सदा के लिये यह गांव छोड़ रहे हैं, उन से अब भेंट होने वाली नहीं, यह सुन कर बालिका, युवती, प्रौढ़ा और वृद्धाएं उन के मकान पर उन्हें देखने आयी थीं, सभी की आंखें आंसू से छलछला आयी थीं। माता को रोते देख कर गोद के छोटे २ लड़कों ने भी रोना आरम्भ किया। प्रौढ़ा और

वृद्धाएं केवल त्रिलोचन के गुण कीर्त्तन कर रही थीं। कोई कहती थीं—"मेरे लड़के, लड़कियों को बड़ा प्यार करते थे।" कोई कहती थीं—"मेरे मकान पर तो रोज़ एक वार जाते थे।" कोई अञ्चल से आंख के आंसू पोंछती पोंछती कहतीं—"अपने कोई लड़का, लड़की थी नहीं; दूसरे ही के लड़के, लड़कियों पर इन की कम ममता नहीं थी। जहां आम या कटहल पका कि लड़कों को ज़बर्दस्ती धर-पकड़ कर अपने यहां ले आते थे, और आम, कटहल खिलाते थे। जिस ने ऐसे साधु आदमी का घर छोड़वाया है, उस का भी कभी भला होगा?"

दुर्बलों के बल रोदन और अभिसम्पात येही दो हैं।

धीरे २ त्रिलोचन के घर छोड़ने का समय आ पहुंचा। उन ने उपस्थित छोटे २ बालकों के मुख चूम, बालक, बालिकाओं को आदर दिखा, युवक, वृद्ध और वृद्धाओं से बिदा मांगी। इस समय कितने उच्चस्वर से रो उठे। लड़के माता के गोद ही से "ऐ माय, जयशंकर कहां जाते हैं?" कह कर मा के अञ्चल खींचने लगे। त्रिलोचन ने बहुतों को समझाया।

किसी २ वृद्ध ने रोकर कहा—"अब क्या हमलोग यहां रहने पावेंगे?"

त्रिलोचन ने उन से कहा—"भगवान् का भरोसा रक्खो, जयशंकर केवल उन्हें ही पुकारो। पाप की वृद्धि कब तक होगी जयशंकर?"

त्रिलोचन चल पड़े। किसी किसी ने रोते २ कुछ दूर तक

उन का अनुसरण किया। गांव वालों के लिये त्रिलोचन का यह मृत्यु दिन था।

त्रिलोचन, तुम भाग्यवान् पुरुष हो, इस में सन्देह नहीं! संसार में तुम्हारे ही समान मनुष्यों का जन्म सार्थक है!

साधक कवि तुलसीदास ने कहा है—"ऐ मनुष्यो, जिस समय तुम संसार में आये, उस समय और लोग हंसते थे, और तुम रोते थे; संसार में ऐसा काम करो कि जब तुम जाने लगो, तब सभी रोवें और तुम हंसो।"

रामसुन्दर! तुम्हारे भाग्य में यह कब घटने वाला? तुम ने जिस जयशंकर का गांव छोड़वा दिया, वह हंसता २ चला गया। क्या तुम जिस दिन संसार छोड़ोगे, उस दिन हंसोगे? तुम्हारे जीवित रहने पर भी कितने दुर्बल और दरिद्र परमात्मा से तुम्हारी मृत्यु-कामना करते होंगे।

नवां परिच्छेद।

बलिया की बात कहते २ अब हमें शाहाबाद जिले में चलना पड़ा। बलिया गंगा से उत्तर है, और शाहाबाद जिला गंगा से दक्षिण। ये दोनों ज़िले अपने प्रान्त के प्रसिद्ध २ ज़िले हैं।

साल की कार्त्तिक मास सुदी २६ वीं तिथि के प्रभात समय यदि कोई बक्सर के सामने वाले घाट पर रहता तो देखता, कि भिन्न २ अवस्था के दो मनुष्य पाल्की पर सवार हो, नाव से पार हो रहे हैं। इन में एक वृद्ध, और दूसरा अभी नवयुवक है।

गंगा पार हो दोनों पाल्कियां बक्सर शहर की ओर चलीं। यहां थाना, दीवानी, अदालत, स्कूल, अस्पताल प्रभृति सभी चीज़ें हैं। यहां म्युनिसिपैलिटी का प्रबन्ध रहने के कारण इसे लोग शहर ही कहते हैं। पहले इस गांव की बग़ल ही में गंगा जी बहती थीं।

बक्सर एक प्राचीन स्थान है, इस में सन्देह नहीं। इस गांव की बहुत सी ज़मीन अब तक जंगल मय और बिना जोती हुई अवस्था में है। बक्सर से पूर्व की ओर थोड़ी ही दूर जाने पर प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त रमणीय दिखलाई पड़ता है।

यहां ब्राह्मणों की संख्या अत्यन्त अधिक है। उन्हीं में एक प्रतिभाशाली गण्यमान्य व्यक्ति आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। वे अपने मकान ही पर कचहरी करते हैं। उल्लिखित पाल्कियां उन्हीं के दरवाज़े पर आ ठहरीं।

पाल्की से उतर कर वृद्ध और नवयुवक ने एक कूप के पास जा कुछ जलपान किया, और कचहरी के खुलने की प्रतीक्षा करने लगे। दो बजे के समय ज़मींदार साहब ने अपनी कुर्सी सुशोभित की। दो एक दर्ख़्वास्तें लेने के बाद पुकार हुई—"नित्यानन्द मुद्दई हाज़िर है?" किसी ने जवाब नहीं दिया।

आसामी की पुकार होते ही उसी पाल्की के वृद्ध ने कहा—"हाजिर।"

हाकिम ने गरम हो कर कहा—"वादी का मुख्तार कौन है?"

मुख्तार राधामोहन ने उत्तर दिया—"हुजूर, मैं हूं।"

फिर प्रश्न हुआ—"वादी कहां है?"

मुख्तार ने कहा—" हुजर, मुझे मालूम नहीं। मवक्किल है दूसरी जगह का, जब से मुझ से दर्ख्वास्त लिखा ले गया है, तब से उस का पता नहीं है। बलिया का वह रहने वाला है।

आसामी ने कहा—"सरकार! मेरा भी मकान बलिया है। मेरी सात पीढ़ी से कोई यहां नहीं आया था, अदालत का वारन्ट देखते ही मेरी बोली बन्द हो गयी थी। मुद्दई हाजिर नहीं होगा यह मैं भली भांति जानता हूं। मैं वादी को भली भांति जानता हूं। कितनी विपद् झेल कर मैं यहां आया हूं, वह मैं ही जानता हूं। इस समय रोगी होने के कारण मैं अपने मकान से बाहर नहीं निकलता।"

हाकिम ने देखा—कहने वाले का चेहरा सचमुच रोगी की तरह है। फिर राधामोहन मुख़्तार से पूछा—" वादी को हाजिर कर सकते हो?"

"मैं कैसे उसे हाजिर कर सकता हूं, हुजूर?"

मजिस्ट्रेट ने कहा—" तब आसामी को रिहायी दी जाय!"

मुख्तार—इस में मुझे कोई अड़चन नहीं।

इस समय आसामी ने कहा—" हुजूर ने मुझे तो रिहाई दी, परन्तु उस वादी का कुछ नहीं हुआ। यह मुकद्दमा क्यों चलाया गया, इस को भी सरकार सुन लें। मेरे गांव के पास ही एक बाबू रामसुन्दर सिंह रहते हैं, उन के साथ मेरा कुछ मनमोटाव है। मन-मोटाव होने का कारण यह है कि वे गांव वालों पर जो अत्या-चार करते हैं, उस को मैं सह नहीं सकता हूं, इस से पीछे में मैं ने एक दो बातें उन के विपक्ष में कही थीं। उनके कामों की देख-रेख

करने वाला एक गोपाल नाम का आदमी है । वह वो बला है कि कितने ही घर उजाड़ डाले बसे बसाये। मुझे भी फंसाने ही के मतलब से उस ने हुजूर में आकर दर्ख्वास्त दी थी। परमात्मा का दिया हुआ, मेरे पास जो कुछ है, उस से मैं गोपाल के जैसे दो एक आदमी को अपने यहां नौकर रख सकता हूं ।"

हाकिम ने इस बात को सुन कर राधामोहन से यह पूछा कि वादी का चेहरा कैसा था। राधामोहन ने वादी की जैसी हुलिया दी, उससे लाला साहब भली भांति समझ गये कि वह गोपाल के सिवाय दूसरा नहीं है।

अब पाठकों से यह छिपाने की ज़रूरत नहीं कि हाजिर आसामियों में एक लाला साहब और दूसरा उन का लड़का व्रजगोपाल है। गोपाल ने यहां आ कर जो नालिश की थी, उस का मतलब यही था कि लाला साहब नाम के एक नौकर को ले कर मैं अर्थात् नित्यानन्द यहां कुछ कारबार करने के लिये आया था। लाला साहब ही के पास मेरा जो कुछ रुपया-पैसा था सो सब रहता था। लाला साहब वह सब ले कर यहां से नौ दो ग्यारह हो गया है। यह बात कल्पित होने पर भी सत्य सी मालूम पड़ती है। इसी बात पर हाकिम ने लाला साहब के नाम से वारन्ट निकाला था, इसी से लाला साहब को बलिया ज़िले से शाहाबाद ज़िले के बक्सर गांव में आना पड़ा था।

हाकिम ने कहा—" आसामी की रिहाई हुई। वादी का अनुसन्धान करने से कोई फल नहीं है। झूठ का मुकद्दमा उस पर चल सकता है; किन्तु सबूत मज़बूत नहीं मिलेगा। वह अपरिचित आदमी है, यहां वह केवल दो एक दिन रहा है। जिस मुख्तार ने

दर्ख्वास्त दी है, सम्भव है, वह भी उस समय कहे कि मैं इसे भली भांति नहीं पहचानता।''

राधामोहन ने यह सुनते ही इधर उधर करना आरम्भ किया—"जी हां, बात तो यही है, केवल एक दिन उसे देखा है, क्या इतने से चेहरा अच्छी तरह याद रह सकता है?"

लाला साहब ने देखा—गोपाल पर मुकद्दमा चलाने से कुछ लाभ नहीं होगा। फिर इसके लिये उनने कुछ विशेष ज़ोर नहीं किया। मन ही मन एक बार उस ब्रह्माण्ड के विचार-पति परम पिता परमात्मा के पास गोपाल के विरुद्ध अभियोग कर पुत्र से कहा—"चलो, घर चलें।" फिर पाल्की पर सवार हो वे जगन्नाथ गञ्ज को चल पड़े।

—:o:—

दशवां परिच्छेद।

पहले ही कह आये हैं कि गोपाल बड़ा पितृ-भक्त था। मातृ-हीन बालक का पिता के प्रति अनुरक्त न रहना ही अस्वाभाविक है। व्रजगोपाल मकान से बक्सर तक छाया की तरह पिता का अनुसरण करता आया था, वहां से लौट कर बुड्ढे की बीमारी और बढ़ गयी।

जगन्नाथ गञ्ज आते ही उन्हें ज्वर हो आया। पाठकों को यह बात मालूम है कि लाला साहब बीमार थे। बलिया से शाहाबाद तक आने जाने में जो हरारत हुई, उसे उन की देह सह नहीं सकी। पिता की बीमारी देख व्रजगोपाल बहुत चिन्तित हुए।

किसी प्रकार बड़े कष्ट से व्रजगोपाल पिता को काशी ले गये। वहां आते ही लाला साहब की बीमारी और बढ़ गयी। वहां ये चलने फिरने से भी लाचार हो गये। वहां पिता को लाने का व्रजगोपाल का उद्देश्य यह था, कि वहां अच्छे डाक्टर, वैद्य, कविराज हैं, उन्हीं से दवा करायी जायगी। काशी में पिता की मृत्यु होगी, जिस से उन्हें शिवलोक की प्राप्ति होगी, व्रजगोपाल का उधर ख़याल नहीं था। पितृ-भक्त, संसार-क्षेत्र का निरवलम्ब पुत्र पिता की मृत्यु का स्वप्न में भी ख़याल नहीं कर सकता था!

लाला साहब के इच्छानुसार व्रजगोपाल उन्हें मणिकर्णिका पर ले गया। लाला साहब ने कहा—"बेटा, मुझे यहीं गंगा के किनारे कहीं एक मकान ठीक कर के रक्खो।" पुत्र ने वैसा ही किया; पिता को लेकर गंगा के किनारे एक मकान ले वहीं रहने लगा। लाला साहब का ज्वर क्रमशः बढ़ने लगा। साथ साथ खांसी का भी आसार मालूम हुआ। व्रजगोपाल पिता की सेवा-शुश्रूषा करने और दवा खिलाने के निमित्त अस्त व्यस्त हो उठा, उन लोगों के साथ एक मात्र भृत्य था। व्रजगोपाल के हाथ में रुपये अधिक नहीं थे। वह बनारस के अपने एक सहपाठी से कुछ रुपये उधार ले आये।

लाला साहब की भलीभांति दवा होने लगी। रोगी की हालत दिन २ ख़राब होने लगी। लालासाहब पहले ही समझ गये थे कि अब मेरे जीने की आशा नहीं। व्रजगोपाल के मन में अब तक ऐसा विचार नहीं आया था; किन्तु अब पिता की अवस्था देख उन्हें भी भय होने लगा। डाक्टर ने कहा—"बीमारी की हालत

में बहुत दूर तक जाने से ही बीमारी बढ़ गयी है । बीमारी बहुत ख़तरेनाक हो गयी है, इस बात को सुनते ही व्रजगोपाल बच्चे की तरह रोने लगे। डाक्टर ने उन्हें समझा बुझा कर कहा—"अभी ये अच्छे हो सकते हैं । आप इस प्रकार घबड़ा जायंगे, तो बड़ा गड़बड़ होगा। भला, इनकी सेवा शुश्रूषा कौन करेगा ?"

व्रजगोपाल रोते २ बोले—"महाशय, मैं कैसे न घबड़ाऊं ? इस संसार में पिता के अतिरिक्त मेरा अपना कोई नहीं है । पिता ने मेरे माता, पिता दोनों का काम किया है। इस ज़िन्दगी में एकबार भी इन ने मुझे कोई कड़ी बात नहीं कही है, इस समय भी मेरी शिखा खुली रहती है, तो आप अपने पास बुला कर उसे बांध देते हैं ! मुख पर पसीना देख, अपनी चादर से उसे पोंछ देते हैं । पिता आप कभी अच्छा कपड़ा नहीं पहनते थे; किन्तु मेरे शरीर पर फटा-पुराना कपड़ा वे कभी देख भी नहीं सकते थे। उसी पिता को मैं विदेश में गंवा रहा हूं, भला मैं नहीं रोऊंगा तो कौन रोवेगा ?

व्रजगोपाल की बातें सुन कर डाक्टर साहब की आंखें भर आयीं। वे बड़े कष्ट से उन्हें समझाने लगे। थोड़ी देर के बाद व्रजगोपाल के मुख से बड़े जोश से निकल पड़ा—"भगवान्, जो षड्-यन्त्र रच कर मेरे पिता के बक्सर जाने का कारण हुआ है, उस का विचार आप ही करें।"

डाक्टर साहब ने बक्सर जाने की बात सुन [illegible] थी। षड्यन्त्र की बात सुन उस का मर्म न समझ सक[illegible] गोपाल से पूछा—"कौन उन्हें बक्सर ले गया [illegible]

ने संक्षेप में सब कह सुनाया। सुन कर डाक्टर साहब सिहर उठे।

रामसुन्दर और गोपाल ! तुम्हारी करतूत सुन और देख कर मनुष्यमात्र ही सिहर उठेंगे। पितृभक्त पुत्र का मर्म्मभेदी शाप क्या तुम लोगों पर इसी जन्म में नहीं पड़ेगा ?

व्रजगोपाल और डाक्टर, लाला साहब से कुछ दूरी पर थे; तथापि पुत्र का अन्तिम आर्त्तनाद पिता के कान तक पहुंच ही गया।

लाला साहब ने व्रजगोपाल को बुलवाया, और उन्हें अपनी शय्या की बग़ल में बैठने का इशारा किया। इस समय तक लाला साहब बातचीत कर सकते थे। ज्ञान इन्हें पूर्ण था। वे बोले—"बेटा, रोओ मत, किसी का बाप सदा नहीं जीता रहता। तुम्हारे सामने मैं मरता हूं, इस से बढ़ कर मेरे लिये सौभाग्य की क्या बात होगी ? अन्तिम समय मेरे मुंह में तुलसी, गंगाजल देना और गीता का पाठ सुनाना। तुम किसी प्रकार मुझे गंगा में यहां फेंक जाओगे, तो मेरी अवश्य मुक्ति होगी।"

व्रजगोपाल रो उठे। लाला साहब ने उन्हें चुप होने के लिये कहा—"बेटा, अब मुझे किनारे पर ले चलो।"

पाठकों को वह बात अभी तक भूली न होगी कि एक दिन देवशरण शर्म्मा और रामसुन्दर ने आलोचना की थी, कि व्रजगोपाल का हिन्दू धर्म्म पर प्रेम नहीं है। व्रजगोपाल के अन्तःकरण में लाला साहब के समान विश्वास न होने पर भी उनने इस प्रकार पिता की आज्ञा का पालन किया और उन के इच्छानुसार काम करने लगे, कि संसार में बहुत थोड़े लड़के उस प्रकार से पिता के

अन्तिम समय उन की सेवा करते हैं। व्रजगोपाल अपने पिता को प्रत्यक्ष देवता समझते थे। जान बूझ कर उनने कभी अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया है। यह बात भी ठीक है, कि व्रजगोपाल अधर्मी नहीं थे। कुछ विशेष अनुष्ठानों पर उन की आस्था नहीं थी, और जो उन में नहीं था, वह संकीर्णता है। इसी सूत्र को लेकर रामसुन्दर इन की निन्दा करते थे। लाला साहब ने कभी इस सम्बन्ध में पुत्र को कुछ नहीं कहा है। मृत्यु के पहले उन के अभिलषित कार्य्यों को भक्त पुत्र ने बड़ी निष्ठा के साथ किया। लाला साहब ने कहा—"बेटा, मरने के पहले एक वार मुझे माता के दर्शन करने की इच्छा होती है।" व्रजगोपाल एक पाल्की पर पिता को चढ़ा कर अन्नपूर्णा जी के मन्दिर में ले गये। उठने चलने की शक्ति से लाचार वृद्ध लाला साहब ने हाथ शिर पर रख कर देवता को प्रणाम किया। गंगा किनारे आ कर लाला साहब ने कहा—"बेटा, अब मैं जल मांगूं तो मुझे दूसरा जल मत देना, यह गंगाजल ही अब से देना।" व्रजगोपाल पिता के मुख में गंगा-जल ही देने लगे।

सन्ध्या होने से कुछ पहले ही लाला साहब को भू-शय्या दी गयी। व्रजगोपाल और उन के स्वजातीय भृत्य के सिवाय वहां और कोई नहीं था। बीच बीच में भृत्य को इधर उधर भेजने की ज़रूरत पड़ती, तो अकेले व्रजगोपाल ही पिता के पास बैठे रहते।

आधी रात होने के कुछ ही पहले से लाला साहब की बोली लड़खड़ाने लगी। कहा—"बेटा, गीता सुनाओ।"

वृजगोपाल—" बाबू जी, अब मैं कैसे रहूंगा ?" कह कर उच्च स्वर से रोने लगे। उन का भृत्य उन्हें संभालने की बहुत चेष्टा करने लगा, पर सब व्यर्थ हुआ। वे संभल न सके—रो ही पड़े। पिता के पांव पर शिर रख रोते २ कहने लगे—" पिता जी, मैं ने बहुत अपराध किया है, उन्हें क्षमा करें। अज्ञात में आप के मन में बहुत कष्ट दिया होगा, वे सब भूल जाइये, बाबू जी ! लड़कपन में आप को कितना मारा है, पिता, आप मेरी मां और पिता दोनों के स्थानापन्न थे—आप के स्नेह और वात्सल्य का बदला मैं नहीं दे सका। पिता, मैं तुम्हारी अधम सन्तान हूं।"

वृजगोपाल का क्रन्दन सुन कर किनारे पर लगी नावों से कितने ही नाविक उतर आये, और उस शोकावह दृश्य को देख कर वे भी बार बार आंसू बहाने लगे।

भृत्य वृजगोपाल को समझाने पर था। कहता था, मालिक का अन्तिम समय आ पहुंचा है, इन्हें पाठ सुनाइये। वृजगोपाल को पिता की आज्ञा याद हो आयी। आंख के आंसू तुरन्त पोंछ कर ही उनने—" धर्म-क्षेत्र कुरु-क्षेत्र "—आरम्भ किया। तुलसी-गंगाजल लेकर थोड़ी २ देर पर उन के मुख में देने लगे। इसके थोड़ी ही देर के बाद बुड्ढे का प्राण पखेरू उड़ गया।

वृजगोपाल ने अश्रुप्लावित मुख से उसी रात में मृत-देह के संस्कार की व्यवस्था को।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही वे मकान के लिये चल पड़े।

—:०—

ग्यारहवां परिच्छेद ।

त्रिलोचन के देश-त्याग और लाला साहब की मृत्यु से रामसुन्दर बड़े ही सन्तुष्ट हुए; क्योंकि अब उन की बातों या कार्य्यों का प्रतिवाद करने वाला कोई नहीं रहा । रामसुन्दर का अब पौ बारह पड़ गया । अब इन के मन में जो २ आता, वही करने लगते । गांव के लोग पहले ही से उन से उचटे थे । लाला साहब की मृत्यु से कितने पागल के समान हो गये । खुल्लमखुल्ला कुछ न बोलने पर भी मनही मन सभी रामसुन्दर और गोपाल को अपना शत्रु समझने लगे । रामसुन्दर की ड्योढ़ी पर अब कोई अपनी इच्छा से बैठने उठने नहीं जाता, केवल देवशरण शर्म्मा कुछ पाने की लालच से कभी २ वहां जाते थे; क्योंकि रामसुन्दर के मकान पर पूजा पाठ का सिलसिला अच्छा लगा है; किन्तु लाला साहब के प्रति निर्दय व्यवहार करने से देवशरण शर्म्मा के भी मन में बड़ी गहरी चोट बैठी थी ।

रामसुन्दर ने गांव के लोगों के मन का भाव समझ कर कुछ दिन के लिये वहां से कुछ दूर रहने का विचार किया । आप का चमरपुर नाम का एक ताल्लुका था, और गंगा के किनारे ही इस ताल्लुके की कचहरी थी, रामसुन्दर वहीं चले गये ।

गांव में ऐसा एक भी आदमी नहीं था, जो व्रजगोपाल के साथ सच्चे हृदय से सहानुभूति न दिखलावे । लाला साहब को सभी चाहते थे । रामसुन्दर के आचरण से वह श्रद्धा और प्रेम और भी बढ़ गया था । लाला साहब के श्राद्ध में प्रायः सभी ने सहायता

दी। पितृ-वियोग होने के बाद व्रजगोपाल अधिक दिन घर पर नहीं रहे। अपने पिता के परिचित किसी एक बड़े आदमी के अनुरोध से शीघ्र ही उन्हें सबरजिस्ट्रार की नौकरी मिल गयी। नौकरी पर जाने के दिन गांव के प्रायः सभी अच्छे २ आदमियों ने इकट्ठा हो, उनकी मंगल कामना के साथ उन्हें विदा किया।

और रामसुन्दर को! उन्हें बिदा करने कोई नहीं आया; बल्कि मन ही मन सभी प्रार्थना करते थे, कि ये फिर यहां लौट कर न आवें। फलतः जन साधारण की सहानुभूति सर्वदा ही अत्याचार-ग्रस्त की ओर दौड़ती है। यद्यपि अत्याचारी के प्रबल होने पर मनुष्य प्रकट रूप से अनेक स्थलों पर उस के विरुद्ध कुछ चीं-चपड़ नहीं करता है, किन्तु मन ही मन उसे कोसा करता है, इस में कोई सन्देह नहीं।

रामसुन्दर चमरपुर जाकर प्रजाओं का रुधिर चूसने लगे; वसूल २ टैक्सों से तहवील भर गया। राम-सुन्दर के कचहरी में आते ही कई प्रजाओं ने उन्हें नज़राना दिया था। इसके बाद रामसुन्दर उनकी फौजदारी और दीवानी के हाकिम का काम करने बैठे। इन के विचार में प्रभेद यही रहता था कि इन के दीवानी और फौजदारी दोनों प्रकार के मुकद्दमे में ही दण्ड लगाया जाता था। किसी ने अपने भाई से कोई कड़ी बात कही है, बस, जहां इन ने सुन पाया, कि उस पर दश रुपये जुर्माना मढ़ दिया। अमुक की भांभी पर भ्रूण हत्या करने का सन्देह होता है, बस, उस पर पचास रुपये जुर्माने के लाद दिये गये! किसी की विधवा बहन निकल गयी है, बस, इसका संवाद पाते ही उस के नाम

पच्चीस रुपये जुर्माना कर दिया गया । इसी प्रकार निरीह कृषकों के श्रम साध्य अर्थ को रामसुन्दर अपहरण कर के अपनी सन्दूक में भरने लगे । साथ ही साथ राम-सुन्दर के पाप की सन्दूक भी भरने लगी । किन्तु उधर उन का ध्यान नहीं है ।

बारहवां परिच्छेद ।

बहुतों का विश्वास है कि डकैत, चोर प्रभृति के सिवाय दूसरा कोई मनुष्य के प्रति अकारण अत्याचार नहीं कर सकता । राम-सुन्दर जैसे मनुष्यों के चरित्र को जिन ने नहीं देखा है, उन का यह कहना असङ्गत नहीं है । पहले ही कह आये हैं कि चमरपुर की कचहरी गंगा के पास ही है, यहां से गंगा आध मील के भीतर ही हैं । चमरपुर गंगा से दक्षिण ओर है । यहां अधिक आदमियों का आश्रय-स्थल नहीं है । चमरपुर की कचहरी से पश्चिम ओर एक नदी है, जो दक्षिण बड़ी दूर से आकर यहां पास ही में गंगा से मिल गयी है, यद्यपि गंगा का पाट यहां विशेष चौड़ा नहीं है, पर वर्षा में इधर चारों ओर जल ही जल हो जाता है ।

एक दिन सन्ध्या के समय रामसुन्दर दो चार आदमियों को साथ ले गंगा के किनारे किनारे टहलते हुए उक्त नदी और गंगा से जहां संगम हुआ है, वहीं आ पहुंचे । देखा कि वहां एक बड़ी नाव बंधी हुई है । नाव पर बहुत आदमी हैं । उन ने एक आदमी से पूछा—“ कहां की नाव है ? ”

नाव के आदमी ने जवाब दिया—" हम लोग बनारस से आ रहे हैं, पटना जाना है। बनारस से लौटते समय यहां आने पर कुछ आंधी पानी का रङ्ग दीख पड़ा, इस से यहीं नाव बांध कर आज रहना उचित समझ ठहर गये हैं। कल सबेरे यहां से हमारी नाव खुलेगी।"

राम०—यहां जो तुम लोगों ने नाव बांधी है, उस के लिये मालगुज़ारी दी है ?

नाव का आदमी—जी नहीं, नदी में नाव खड़ी करने की मालगुज़ारी कैसी ? हम ने पहले भी कई वार यहां पर अपनी नाव ठहरायी है, टिके हैं, पर कभी तो किसी को कुछ मालगुज़ारी नहीं दी है।

राम०—नहीं, तुम लोगों को ज़रूर मालगुज़ारी देनी पड़ेगी।

नाव के आदमी—हम लोगों के मालिक ऊपर गये हैं। रसोई बनाने के लिये हम लोगों के पास गोहरी गोइठा नहीं था, वही लाने के लिये हम में से एक मल्लाह गया है, उस के साथ २ वे लोग भी इधर के देश मुल्क देखने के लिये नाव पर से उतर गये हैं, जब तक वे लौट नहीं आवें, तब तक हम लोग इस के विषय में कुछ नहीं कह सकते हैं।

रामसुन्दर को यह जवाब पसन्द नहीं पड़ा, वे कुछ गरम होकर बोले—" और वे यदि न लौटें ? मेरी ज़मीन में तुम लोगों ने नाव जो बांध रक्खी है, उस के लिये पांच रुपये दे दो।"

नाव के आदमी—हमलोगों के पास रुपये पैसे नहीं हैं। इस प्रकार की तो ज़बर्दस्ती मैं ने कहीं नहीं देखी, यहां रास्ता चलते मालगुज़ारी देनी पड़ती है !

रामसुन्दर को उसी समय रुपये वसूल करने की उत्कट इच्छा हो आयी, किन्तु देखा, कि मेरे साथ में अधिक आदमी नहीं हैं। नाव पर बहुत आदमी थे, और यदि उन ने यहां से नाव खोल दी, तो ये मुंह ताकते रह जायंगे, इन की कुछ नहीं चल सकती। रामसुन्दर कुछ बिगड़ कर बोले—"अच्छा, उन के आने ही पर देना।"

इतना कह वे कचहरी को लौट चले।

चिराग़, बत्ती का समय होते २ बनारस की नाव के आदमी जो ऊपर गये थे, वे अपनी सब चीज़ें लिये दिये आ गये। नाव पर जो थे, उन ने रामसुन्दर के साथ जो बातचीत हुई थी उस का वृत्तान्त उन से कह सुनाया। उन में जो एक वयोवृद्ध थे, उन ने राय दी कि इस स्थान को छोड़ कर चल देना ही हमारा कर्त्तव्य है। ऐसा कोई काम नहीं, जिसे रामसुन्दर न कर सकते हों। मालगुज़ारी नहीं मिलने ही से वे कुछ लाल, पीले हो गये थे। गंगा में नाव ठहराने की मालगुज़ारी! किन्तु जब वे मांगते हैं, तो बिना लिये शायद ही पिण्ड छोड़ें।

नाविकों में कुछ ने कहा—"इस रात को अब गंगा में चलना असम्भव है। हमलोग न तो चोर ही हैं और न डकैत ही। हमारा वे कर ही क्या सकते हैं?"

पहर रात जाने पर नाव के प्रायः सभी यात्री सो गये। इस के कुछ ही काल के उपरान्त नौका में से कुछ कोलाहल उठा। रामसुन्दर के आदमी नाव पर आकर मालगुज़ारी मांगते थे। नाव के आदमियों ने ज़रा कड़क कर मालगुज़ारी देना अस्वीकार किया।

इसी से दोनों दल में द्वन्द्वयुद्ध होने लगा। रामसुन्दर के आदमियों ने उन्हें मारना आरम्भ किया। थोड़े ही समय में नाव के सभी आदमी पकड़े जाकर रामसुन्दर की कचहरी में लाये गये।

नाव पर जितनी चीज़ें थीं सो सभी लूट ली गयीं।

इन आदमियों के कचहरी पहुंचने पर रामसुन्दर ने उन का अपराध सुन उन्हें बांधने का हुक्म दिया। चोट पूरी लगी थी, इस लिये उस विषय में आज्ञा देने का प्रयोजन न रहा। रामसुन्दर के आदमियों ने नाव वालों को बड़ी निर्दयता से पशु की तरह बांध रक्खा।

अर्जुन लाल नाम के एक रैयत का मकान गंगा के पास ही था। बनारस के यात्रियों ने जहां अपनी नाव बांध रक्खी थी, वहां से एक ही दो रस्सी के अन्तर पर इन का मकान था। रामसुन्दर ने अर्जुन को बुलवाया और उन्हें घर के भीतर ले जाकर न मालूम क्या परामर्श किया। बड़ी देर तक सलाह होती रही। अन्त में अर्जुन घर से बाहर निकले और एक आदमी साथ में लेकर न मालूम कहां चले गये।

उस नावके सभी आदमी उसी प्रकार बंधे ही रहे। सभी कहने लगे कि यहां हमलोगों का ठहरना आज अच्छा नहीं हुआ। गंगा में जाकर आंधी पानी के उपद्रव से उसी में डूब मरते तो वह इस से अच्छा था।

मनुष्यों की निठुरता के सामने अग्नि, जल, प्रभृति की निठुरता कुछ नहीं है। अग्नि, जल प्रभृति में निठुरता है कि नहीं, इसी में सन्देह है। वे बुलाकर तुम्हें विपद्ग्रस्त या दुःखित नहीं

करते, किन्तु मनुष्य के दुर्व्यवहार न सह सकने के कारण अनेक समय अनेक मनुष्य अग्नि की शरण लेते हैं।

राम-सुन्दर ने नाव के यात्रियों को पशु के समान बांध रक्खा है, यह भी कहना ठीक नहीं। पशु को भी मनुष्य निरूपित समय पर भोजन, पानी देते हैं, पर इन्हें वह भो नहीं मिलता। दूसरे दिन सन्ध्या से कुछ पहले एक पुलिस सब-इन्सपेक्टर कुछ कान्स-टेबुलों को साथ लेकर चमरपुर की कचहरी में आये। उन के पीछे अर्जुन लाल थे, पुलिस ने आते ही उन आदमियों को देख कर कहा—"साले, नाव पर सवार हो डकैती करने आये थे?"

कहना नहीं होगा कि अर्जुन लाल ने इन पर डकैती का अभि-योग लगाया था। वे सब इस बात के सुनते ही दंग रह गये। सम्भव है पाठक भी सुन कर दंग हो जायं।

—o—

तेरहवां परिच्छेद।

दारोग़ा साहब ने जांच-पड़ताल करना आरम्भ किया। अर्जुन लाल का मकान देखा गया। रामसुन्दर ने अर्जुन के थाने जाते ही उनके मकान को बहुत सी चीज़ें मंगा कर डकैतों के पास रख दिया था। वह सब पहले ही दिखला दिया गया। दारोग़ा साहब ने एक बार डकैतों की नाव देखने की इच्छा प्रकट की। वहां जाने पर अस्त्र-शस्त्र कुछ नहीं पाया गया। वहां जो चीज़ें पायी गयीं उन में कुछ ये हैं:—टूटी फूटी चीनी की हांड़ी, बताशे का कुण्डा प्रभृति। कुछ डकैत दारोग़ा साहब के साथ में भी थे, उन में एक

ने दिखा दिया—" देखिये, अब तक हमारी कुछ टूटी फूटी चीज़ों हैं; हमारी लकड़ी की दो सिल्ली अब तक वहां नाव में बंधी हुई हैं। ऐसी ही कुछ लकड़ियां बनारस से ख़रीद कर हमलोग अपने मकान पर जा रहे थे, कल सन्ध्या के समय आंधी-पानी का रंग देख कर हम लोग यहीं टिक रहे।

इस के बाद जो २ बातें हुई थीं, उन सब को एक २ कर के वह कह गया। आसामी की बातें सुन, नौका की अवस्था देख, और वादी की कही बातों का विचार कर दारोग़ा साहब के मन में दृढ़ विश्वास हो गया है कि यह मामला सरासर झूठ है। रामसुन्दर ने अवैध उपाय से दारोग़ा साहब को बाध्य करने की चेष्टा की थी, पर वह सब व्यर्थ हुआ। दारोग़ा साहब उस प्रकृति के आदमी नहीं थे। दूसरे ही दिन महकमे में रिपोर्ट गयी—" मेरा विश्वास है कि मामला झूठा है। आसामी ने जो जवाब दिया है, वही सत्य मालूम पड़ता है।"

मुक़द्दमा का पहला इज़हार और यह रिपोर्ट दोनों एक ही समय महकमे में पहुंचे। बड़े दारोग़ा साहब जांच-पड़ताल करने आये। दिन भर रह कर उनने भी वही बात कही, जो दारोग़ा साहब ने कही थी। महकमे के हाकिम ने अर्जुन लाल के ऊपर झूठ इज़हार देने के कारण मुक़द्दमा चलाने का हुक्म दिया।

यह कहना कर्त्तव्य है कि रामसुन्दर अर्जुन को बचाने के लिये नाना प्रकार की चेष्टा करने लगे। एक श्रेणी के ऐसे भी आदमी होते हैं जो मालिक के लिये झूठ इज़हार देना, झूठी गवाही करना, अपना कर्त्तव्य समझते हैं, और इस के लिये सदा प्रस्तुत रहते हैं।

इन के विपद् में पड़ने पर मालिक इन की यथासाध्य सहायता करते हैं। रामसुन्दर के समान आदमी भी इस से विरत नहीं थे। अर्जुन पर फ़ौजदारी सिपुर्द होने पर रामसुन्दर ने उस के लिये कलकत्ते से बारिस्टर बुलाया। मकान पर पूजा-पाठ करवाना आरम्भ किया। अर्जुन के कल्याण के लिये गंगा जी को प्रति दिन सन्ध्या की सन्ध्या दीप-दान होने लगा। किन्तु किसी से कुछ नहीं हुआ, अर्जुन का छुटकारा नहीं हुआ। अर्जुन पर क्रमशः मैजिस्ट्रेटी से दौरा सिपुर्द हुआ और वहां विचार से पांच वर्ष कारा वास दण्ड की आज्ञा हुई! रामसुन्दर ने उसी दिन से अर्जुन की स्त्री और पुत्र के लिये पांच रुपये मासिक की वृत्ति नियत कर दी।

अब तक रामसुन्दर का विश्वास था, कि चाहे मैं जितना पाप करूं, पर भगवान् को एक वार याद करते ही, सब पाप छूट जाते हैं। इस वार उन का विश्वास कुछ शिथिल हो गया। वे यह नहीं जानते थे कि मेरे जैसे लोगों को भगवान् को पुकारने का भी अधिकार नहीं है।

मैं इच्छा पूर्व्वक पाप करूं और अन्त में उन्हें पुकारूं, तो इस पुकार का कुछ फल होने का नहीं। अब तक यह बात समझने का रामसुन्दर को अवसर ही नहीं आया था। अपने जीवन में उन ने कितने आदमियों को कितनी यन्त्रणाएं दी हैं, किन्तु अब तक उस का समुचित फल इन्हें नहीं मिला है। ये सोचते थे—मैं जो पूजा पाठ किया करता हूं, उसी से सभी पाप धौत हो जाते हैं। भगवान् का ब्रह्माण्ड-शासन-रहस्य कौन समझ सकता है? अनेक समय मनुष्य पाप करने के साथ ही उस का दण्ड नहीं भोगते,

इसी से मालूम होता है कि रामसुन्दर जैसे लोगों की बन आती है, और नरक के पथ परिष्कार करते हैं, इसी कारण से वे कुछ समझते नहीं, समझ कर भी कुछ नहीं समझते।

रामसुन्दर ने अर्जुन के लिये सेशन अदालत के दण्ड के विरुद्ध हाईकोर्ट में अपील की, परन्तु उस का भी कुछ फल नहीं हुआ। रामसुन्दर ने अर्जुन को बचाने के लिये जो इतनी चेष्टा की वह केवल अर्जुन ही की भलाई के लिये, सो नहीं रामसुन्दर को भय था, कि अर्जुन का मुक़द्दमा झूठ साबित होने से कहीं मेरे ऊपर भी कोई चक्र न चल जाय। जिस विपद् से ये डरते रहे, आख़िर वह विपद् आ ही गयी। अर्जुन ने रामसुन्दर के कहने से झूठ इज़हार किया था, इस से वे नहीं पकड़े गये; किन्तु कई मनुष्यों को अन्याय से बांधने और मारने के कारण पुलिस ने उन पर भी रिपोर्ट की। हाकिम ने उन्हें तलब किया। इस के पहले रामसुन्दर कभी फ़ौजदारी मामले के आसामी नहीं हुए थे। इस वार हाकिम और पुलिस दोनों उन के विरुद्ध थे, इसी से ऐसा हुआ।

रामसुन्दर मुक़द्दमे से जान बचाने के लिये जी जान से शिर-पैर का पसीना एक करने लगे। जिन सब लोगों को उनने कैद में रक्खा था, या मार-पीट की थी, वे सभी दरिद्र थे। कुछ २ धन दे कर रामसुन्दर ने सबों को अपने पक्ष में मिला लिया। किसी ने रामसुन्दर के विरुद्ध गवाही नहीं दी। उनने मुक़द्दमा उठा लिया। हाकिम ने रामसुन्दर को छोड़ने के समय उन से स्पष्ट कह दिया कि सावधान रहना। अब लोगों के ऊपर ऐसा अत्याचार न

करना। रामसुन्दर नमस्कार कर बिदा हुए। मन ही मन कहा—अब तुम मुझे चमरपुर में पाओगे ही नहीं।

रामसुन्दर कुछ उदास हो चमरपुर से मकान चले गये।

चौदहवां परिच्छेद।

रामसुन्दर के मकान के पास ही एक धनञ्जय नाम के दरिद्र राजपूत रहते थे। धनञ्जय निरीह कृषक था। धनञ्जय के परिवार में उस की स्त्री और दो लड़कों के सिवाय और कोई नहीं था। जो एक दो बीघा ज़मीन थी, उसी को बड़े परिश्रम से आबाद कर धनञ्जय अपने परिवार का भरण पोषण करता था। दूसरा कोई कृषक इस खेत से जितना अन्न पैदा कर सकता, धनञ्जय उस से कहीं अधिक अन्न पैदा करता था।

जब अपने खेत में हल जोतने, बीज बोने, निरौनी प्रभृति का काम नहीं रहता, तब धनञ्जय दूसरे के यहां मज़दूरी पर कुछ काम करता था। धनञ्जय अपना समय कभी आलस्य में नहीं बिताता था। गांव के सभी लोग उसे स्नेह की दृष्टि से देखते और एक आदर्श कृषक समझते थे। समय रहने पर वह रामसुन्दर की भी बहुत कुछ भलाई कर देता था, इसी कारण से रामसुन्दर भी उससे प्रेम करते थे।

धनञ्जय का छोटा परिवार शान्ति पूर्ण था। उस की स्त्री बड़ी पतिव्रता थी। धनञ्जय खेत में खूब कठिन परिश्रम करने पर भी अपने घर आते ही सब परिश्रम भूल जाता था। दोनों लड़कों को

स्वामी के पास रख कर रमणी इस प्रकार पति की सेवा करती, कि जिस से दरिद्र कृषक का हृदय स्वर्गीय सुख से पूर्ण हो जाता था।

अभागी स्त्री बहुत दिन तक पति की सेवा नहीं कर सकी, उसे और दोनों बच्चों को छोड़ कर धनञ्जय ने सहसा परलोक को प्रस्थान किया। रामसुन्दर के चमरपुर से लौटने के दूसरे आश्विन में धनञ्जय की मृत्यु हुई। असहाया रमणी अपने दोनों पुत्रों को ले बड़ी विपद् में पड़ी। मैके में उस के एक भाई थे, उन की अवस्था वैसी अच्छी नहीं थी। धनञ्जय की स्त्री ने उन्हें बुलवा भेजा, और किसी प्रकार स्वामी का श्राद्ध समाप्त किया। श्राद्ध समाप्त होने पर जब उस के भाई ने उसे अपने यहां चलने के लिये कहा तब उस ने कहा—"भाई, यहां अभी कुछ ज़मीन है। इसवार उस में गेहूं भी खूब लगा है। यदि उन्हें मैं अपने घर ला सकूं तो उतने में एक वर्ष चल जायगा। जितने दिन तक यहां रह सकती हूं, रहती हूं, उस के बाद यदि यहां नहीं रह सकी, तो आप ही के यहां चली आऊंगी।"

पाखण्डी गोपाल बहुत दिन पहले ही से धनञ्जय की स्त्री पर बुरी दृष्टि लगाये था। धनञ्जय की स्त्री रूपवती थी। जिस दिन वह विधवा हुई, गोपाल के अन्तष्करण में उसी दिन पाप बुद्धि धक् धक् कर प्रज्वलित हो उठी। धनञ्जय के श्राद्ध के समय गोपाल ने बिना पूछे, बिना बुलाये, अनेक काम काज किये थे। सहसा बेचारी स्त्री ने इस का कुछ मतलब नहीं समझा। श्राद्ध के बाद जब गोपाल अपनी घनिष्ठता बहुत बढ़ाने लगा, तब उसे सन्देह हुआ। धनञ्जय की स्त्री गोपाल के सामने नहीं होती थी,

किन्तु गोपाल उस के बड़े लड़के को सम्बोधन कर सर्वदा आ उस की खोज खबर लेता था और आत्मीयता दिखलाता था।

एक दिन सन्ध्या के समय गोपाल धनञ्जय की स्त्री को अकेले में पा अपना बुरा प्रस्ताव कर बैठा। बेचारी सती साध्वी पति-व्रता सुनते ही सिहर उठी। उस के मुख से आग को चिनगारियां निकलने लगीं। गोपाल वहां ठहर नहीं सका, गोपाल के चले जाने पर धनञ्जय की स्त्री बड़ी देर तक अपने आप रोती रही। अन्त में भगवान् से अपनी रक्षा के लिये प्रार्थना कर पास के एक पड़ोसी के घर चली गयी। टोले की एक बुड्ढ़ी स्त्री धनञ्जय के मरने के बाद से उस के घर सोती थी। धनञ्जय की स्त्री ने पड़ोसी की स्त्री से अनुरोध किया कि आज से तुम्हारा एक लड़का रात में जा कर मेरे मकान पर सोवे। प्रौढ़ा प्रतिवेशो पत्नी के कारण पूछने पर धनञ्जय की स्त्री ने एक २ कर सब रोते हुए कह सुनाया। वह सुन कर गोपाल को गाली देने लगी, इसके बाद कहा—" मैं अपने नवीन को कह दूंगी, वह रात में जाकर तुम्हारे मकान में सोया करेगा। तुम लोगों के आशीर्वाद से मेरा नवीन गोपाल जैसे सात आदमियों को अकेला मार सकता है। एक लाठी लेकर नवीन रात के समय तुम्हारे यहां सोवेगा। और इस बात को एक वार उस घर की मालकिनो को जना देना चाहिये। वह पति के समान नहीं है।"

धनञ्जय की स्त्री ने कहा—" अब आज तो रात हो गयी। कल जाऊंगी।"

" हां, कल भोरे ही जाकर कह आना।"

इसके दूसरे दिन प्रातःकाल रमणी रामसुन्दर की स्त्री के पास गयी और बोली—"मैं एक बात कहने आयी हूं।" रामसुन्दर की स्त्री के जरा पास आ जाने पर विधवा अपने मन की बात कहने लगी—"बहन! मैं जिस अवस्था में यहां रहती हूं, वह आप जानती हैं, पर मालूम होता है कि अब मैं यहां नहीं रहने पाऊंगी।"

रामसुन्दर की स्त्री का हृदय कांप उठा। उन ने समझा कि मेरे स्वामी नहीं तो अबदुल या गोपाल इन तीनों में किसी ने अवश्य असहाया विधवा पर कोई अत्याचार किया है। पूछा—"क्या हुआ है यादव की मां?" धनञ्जय के बड़े लड़के का नाम यादव और छोटे का नाम माधव था। रमणी ने उत्तर दिया—"बहन, आप का गोपाल मेरी जात लेना चाहता है। जब से किस्मत फूटी है, तब से मैं कितना कह सुन कर तो केशव की चाची को रात को अपने यहां सुलाती हूं, और अपने दोनों बच्चों को ले कर पड़ रहती हूं।

"गोपाल प्रायः मेरे मकान की ओर से आता जाता है। कभी २ यादव और माधव को पुकार कर दो चार बातें कहता है। कल सन्ध्या के समय उस ने जो कहा है वह अब क्या कहूं बहन! भगवान् करें, उस के इस मुख में पिल्लू पड़े,—अन्त में नवीन की मां के पास जा कर रोने लगी, उन ने नवीन को मेरे दरवाज़े पर रात को सोने के लिये कहा है। आप मुझ पर कुछ ख़याल नहीं रक्खेगीं, तो मैं यहां नहीं ठहर सकूंगी।"

रमणी ने अञ्चल से आंख के आंसू पोंछे।

इस बात से रामसुन्दर की स्त्री के कलेजे में बड़ी गहरी चोट बैठी। उन ने विधवा को बहुत समझा बुझा कर कहा—"जाओ, तुम घर जाओ, जिस प्रकार वह मुहझौंसा इस गांव से निकले, उस की कोशिश करूंगी।

पन्द्रहवां परिच्छेद।

रामसुन्दर की स्त्री ने उसी दिन पति से गोपाल की चर्चा चलायी और कहा—" उस को जल्द यहां से हटाओ।"

रामसुन्दर ने कहा—" वह तुम्हारा क्या बिगाड़ता है ?"

गृहिणी—" मेरा क्या बिगाड़ेगा ? गांव के लोगों का जो बिगाड़ रहा है, उसी से स्वर्ग जाने के लिये पूरी सीढ़ी लग रही है !"

राम०—किस का क्या किया है ?

गृ०—किसका क्या किया है, यह भी पूछना है ! त्रिलोचन को करकरवे कोपीन किस ने किया ? व्रजगोपाल के पिता को रोग की हालत में बक्सर लिवा जाकर बेचारे को किसने मार डाला ?

राम०—यह सब तुम से किस ने कहा ?

गृ०—चाहे कोई कहे, पर यह सब पाप तुम्हीं पर पड़ेगा !

राम०—जब तुम से पापपुण्य का परामर्श करने जायं, तब यह सब कहना।

गृ०—उस के विषय में मुझ से क्यों परामर्श करने चले ! परामर्श करने के लिये तो तुम्हें अबदुल और गोपाल मिल ही गये हैं।

राम०—अबदुल और गोपाल तुम्हारी आंखों में क्यों इस प्रकार खटक रहे हैं ?

गृ०—ऐसा आदमी भी आंख का कांटा न होगा, तो कौन होगा ? मालूम पड़ता है, गांव के आदमी, गोपाल को विना गंगा में बहाये, और अबदुल को विना गोर दिये, अब नहीं मानेंगे। साथ ही साथ तुम्हें भी लोग कम नहीं शाप दे रहे हैं। अबदुल और गोपाल तो तुम्हारे ही बल पर लोगों को सता रहे हैं !

राम०—मालूम होता है कि तुम्हीं मेरी मालिक हो ।

गृ०—मालिक होऊं या जो होऊं, पर मेरी एक बात रक्खो। गोपाल और अबदुल को जल्द यहां से हटाओ।

राम०—आज तुम्हें ऐसी सनक क्यों सवार है ? त्रिलोचन और लालासाहब वाली बात तो अब बहुत पुरानी हो गयी।

गृ०—त्रिलोचन और व्रजगोपाल के साथ जिस ने ऐसा व्यवहार किया, वह गांव के दीन दुःखियों के साथ कैसा व्यवहार कर सकता है ?

राम०—क्या कर सकता है या करेगा, यह बात दूसरी है। क्या किया है यह कहो। किसी ग़रीब का कुछ किया भी है कि यों ही ?

गृ०—बिना किये ही कहती हूं ?

राम०—क्या ?

गृ०—धनञ्जय को मरे अभी दो महीने भी नहीं हुए । कल सन्ध्या के समय उस के घर जाकर गोपाल ने उस से भलाबुरा कहा था। उस ने समझा था कि ग़रीब होने के कारण वह ज़रूर नीच

चाल-चलन की होगी, हरामज़ादा कहीं का—वही यादव की मां आज भोरही मेरे यहां आकर रोने लगी।

रामसुन्दर में इन्द्रिय लोलुपता नहीं थी। गोपाल के इस दोष का पता उन्हें था। उन ने कहा—"यही बात है, इस के लिये इतनी भूमिका की क्या ज़रूरत थी, आज ही गोपाल को बुलाकर मैं डांट देता हूं, जिस से फिर उधर से नहीं जायगा।

गृ०—डांटने वाटने की अब ज़रूरत नहीं है, उसे एकबारगी यहां से निकाल ही दो।

राम०—यह ज़िद्द तुम्हारी अच्छी नहीं।

गृ०—ख़ैर बुरी ही सही; पर मैं तुम्हारी स्त्री हूं, इसी ख़याल से मेरी यह ज़िद्द रक्खो।

रा०—रखने लायक रहती, तो रखता।

गृ०—गोपाल को तुम अपने यहां से नहीं निकाल सकते?

राम०—नहीं; अच्छा, स्त्री होकर तुम्हें इतनी ज़िद्द क्यों है?

गृ०—ज़िद्द करने पर भी तो तुम उसे रखते नहीं।

राम०—मैं किसी प्रकार का आदमी रखता हूं, निकालता हूं, इस से तुम्हारा क्या बिगड़ता है?

गृ०—कुछ नहीं बिगड़ता तो मैं नहीं कहती। जान-बूझ कर पाप इकट्ठा कर रहे हो।

राम०—मैं कुछ पाप नहीं इकट्ठा करता। इतना जो सुनना पड़ा है, वह, तुम्हें मुंह लगाने का फल है। तुम अब शिर पर चढ़ती जाती हो।

गृ०—इसी को सिर पर चढ़ना कहते हैं?

राम०—अब शिर पर चढ़ने में बाकी ही क्या रहा? दोनों शाम लेक्चर झाड़ती हो।

गृ०—अच्छा, अब कुछ नहीं बोलूंगी। सामने रहने पर यह सब देखा, सुना नहीं जाता, इसी से कभी एक दो बातें कह देती हूं।

राम०—नहीं देखा सुना जाता तो यहां से हटही जाने में सब झगड़ा खतम था।

गृ०—यदि तुम्हारी यही इच्छा है, तो मैं यहां नहीं रहूंगी। यहां से मेरे चले जाने ही में यदि तुम खुश हो, तो मैं यहां नहीं रहूंगी।

राम०—हां, यहां से चली जाओ, तो बड़ा अच्छा हो। यह दोनों शामका खटखट मुझे पसन्द नहीं।

गृ०—अच्छा, एक सवारी ठीक कर दो। मैं कल ही अपने मैके च ली जाऊंगी। तुम अपने गोपाल और अबदुल को लेकर सुख-पूर्वक यहां रहो।

राम०—तुम्हारी जैसी स्त्री का न रहना ही अच्छा है।

गृ०—भगवान् करें कि अब मुझे फिर यहां आना न पड़े।

गृहिणी की आंखें आंसू से छलछला आयीं।

रामसुन्दर ने उधर ध्यान नहीं दिया, विरक्ति के साथ वहां से उठ गये।

उस दिन फिर उनने अपनी स्त्री से कुछ बात-चीत नहीं की। चमर-पुर की घटना से अब तक उन का मन उदास रहता था। उनने सोचा फ़िलहाल कुछ दिन के लिये ऐसी ढीठ स्त्री का यहां से अलग रहना ही अच्छा है।

दूसरे दिन प्रातःकाल सवारी आयी। गृहिणी अपनी कन्या को लेकर अपने मैके चली गयी।

रामसुन्दर का लड़का कलकत्ते पढ़ता है। भाभी कुछ महीने से काशी वास करती हैं; सुतरां रामसुन्दर अकेले मकान पर रहे। केवल गोपाल, अबदुल और दो एक नौकर, उनके साथ रहे।

रामसुन्दर ने समझा नहीं कि मैं ने जान-बूझ कर घर की लक्ष्मी को इस अनादर के साथ निकाल बाहर कर दिया। भारत में रामसुन्दर के समान अनेक नीच अपनी गृहिणी के ही पुण्य से भर-पेट दाना खाते हैं। विधि-विधान से अथवा पुण्य-भूमि भारत के गुण से अनेक साध्वी रमणियां ऐसे २ पाखण्डियों की अङ्क शायिनी होती हैं।

—o—

सोलहवां परिच्छेद।

पहले ही कह आये हैं कि चमर पुर की घटना से रामसुन्दर का मन बहुत खिन्न हो गया था। इस जीवन में कभी उन के इतने रुपये नहीं खर्च हुए थे। प्रजाओं का रुधिर चूस कर रामसुन्दर ने चमर-पुर में जो रुपये इकट्ठा किये थे, उस से कहीं अधिक रुपये अर्जुन और उन के मामले में खर्च हो गये थे। रामसुन्दर ने सोचा, लोगों को मारना-पीटना छोड़ देते, तो यह सब नहीं होता। इज़-हार देना ही बुरा हुआ। मैं यह थोड़े जानता था कि दारोगा घूस नहीं लेगा? अब इस प्रकार से काम करना ठीक नहीं। गांव में बैठ कर ऐसे आदमियों के ऊपर अत्याचार करूंगा, जिन्हें राज द्वार तक

जाने की शक्ति ही नहीं है। बराबरी वा बड़े आदमियों के ऊपर अत्याचार करने ही के लिये चतुरता की आवश्यकता होती है। ग़रीबों को तो खुले-आम सताया जा सकता है।

पहले धनञ्जय की विधवा स्त्री ही के ऊपर उन का ध्यान गया। गोपाल ने उन्हें बढ़ावा दिया। धनञ्जय की स्त्री ही के कारण तो गृहिणी को यहां से हटाना पड़ा। रामसुन्दर ने देखा, धनञ्जय के ३, ४ बीघा खेत में खूब गेहूं लगा हुआ है। उन के मन में आया कि धनञ्जय का सब गेहूं काट लिया जाय। धनञ्जय इन्हीं का आसामी था। पाठकों को यह बात मालूम है कि धनञ्जय को उस की विधवा पत्नी और दो लड़कों के सिवाय और कोई नहीं है। ऐसे लोगों के ऊपर अत्याचार करना बड़ा सहज है। रामसुन्दर ने अपनी महाजनी बही निकाली। देखा, एक बार धनञ्जय ने पांच रुपये ऋण लिये थे। उसने सूद-मूर साथ वह दे दिया था। किन्तु एक प्रकार से हिसाब करके गोपाल ने ढाई तीन रुपये उस के नाम बाक़ी गिरा दिये। रामसुन्दर ने मन ही मन स्थिर किया कि लोगों से पूछने पर यही कहा जायगा। जो गेहूं लगा है, वह सब एकबएक काट ही लेने से वह गांव छोड़ कर भाग जायगी। तब इस खेत के दूसरे के हाथ बन्दोबस्त कर ने से प्रतिवर्ष आठ रुपये मज़े में मिल जायंगे।

बेचारी अनाथा विधवा को इस की कुछ ख़बर नहीं। वही खेत उस का अवलम्ब था। मेरे स्वामी का अर्जित शस्य दूसरा कोई ले ज़ा सकता है, ऐसी धारणा स्वप्न में भी उस के मन में नहीं थी। धनञ्जय के मरने के बाद उस की अवस्था देख गांव के

अनेकों मनुष्य उस पर दया रखते थे। गेहूं को पका देख कर उस ने अपने दो चार पड़ोसियों से उस को काटने के लिये अनुरोध किया था। उन लोगों ने कहा—हम सभी मिल कर एक दिन जा तुम्हारा गेहूं काट आवेंगे। तुम्हें हमलोगों को कुछ देना नहीं पड़ेगा।

जिस दिन गांव वाले गेहूं काटने के लिये जाने वाले थे, उस के एक दिन पहले प्रातः काल ही यादव की मां ने देखा, कि उस के खेत में कुछ लोग गेहूं काट रहे हैं। उस का खेत उस के घर से बहुत नज़दीक था। उस ने समझा, जिन लोगों ने खेत काटने के लिये कहा था, वेही आज अवकाश मिल जाने के कारण, एक दिन पहले ही आ कर, खेत काट रहे हैं। किन्तु मुझ से बिना कहे ही ये क्यों चले गये, यह सोच कर उस ने उन लोगों के पास एक बार जाना उचित समझा। माना, कि मैं उन्हें एक पैसा भी नहीं दूंगी; पर इसलिये वे मुझे ख़बर क्यों नहीं देते?

खेत के पास आ कर यादव की मां ने देखा, कि जो गेहूं काट रहे हैं, वे उस के परिचितों में नहीं हैं। उस के मन में कुछ सन्देह हुआ। आधे मुख तक घूंघट कर के, उस ने यादव से पुछवाया, कि "तुम लोग यह खेत क्यों काट रहे हो?"

उन लोगों ने जवाब दिया—"मालिक ने हुक्म दिया है। धन-अय के पास उन के रुपये होते थे, उसी रुपये के बदले में वे उसका गेहूं कटवा रहे हैं।"

मालिक कहने से लोग रामसुन्दर को ही समझते थे। मालिक गेहूं कटवा रहे हैं, यह सुनते ही उस के सिर पर बिजली गिर

पड़ी। उस की रमणी-जनोचित लज्जा न मालूम कहां चली गयी। जो लोग गेहूं काट रहे थे, उन लोगों के सामने आ कर बोली—"पहले मुझे काटो, तब पीछे मेरा गेहूं काटना।"

जो गेहूं काट रहे थे, वे लुटेरे या डकैत नहीं थे। मज़दूरी के लालच से वे रामसुन्दर का काम करने आये थे। इन लोगों ने पहले समझा था, कि विधवा की राय से ही गेहूं काटा जा रहा है। इस समय उस के करुण-क्रन्दन को सुन कर उन लोगों ने अपने २ हाथ का हथियार रख दिया, और उन में एक ने कहा—"जाओ, एक आदमी जाकर मालिक को बुला लाओ।"

रामसुन्दर का स्नान हो गया है। खड़ाऊं पहने माला खट-खटाते वे आ कर खेत की एक बग़ल में खड़े हो गये। यादव की मां उन्हें देखते ही उन के पास गयी और उन के पांव पर गिरने लगी। "छूओ मत, छूओ मत" कह कर मालिक कुछ पीछे हट गये। विधवा रोते २ कहने लगी—"मालिक ! क्या आप ही ने मेरा गेहूं काटने को इन्हें कहा है ? आप को रुपये देने की बात तो मैं ने कभी नहीं सुनी है।"

"वह तू कैसे सुनेगी ? वह धनञ्जय जानता था।" रामसुन्दर ने उत्तर दिया।

रमणी ने फिर पूछा—"सरकार ! कितने रुपये देने हैं ?"

"क्या इस का तुझे जमाखर्च देना होगा ?" कह कर राम-सुन्दर ने विलक्षण विरक्ति दिखलायी, और साथ साथ हुक्म दिया—"काटो जी, तुम लोग क्या देखते हो ? जाओ, गेहूं काटो।"

विधवा की बुद्धि मारी गयी थी, उस ने फिर बाधा दिया। जहां तक गेहूं काटा गया था, वहीं जा कर बैठ रही। मज़दूरों में दो एक तो वहां से उठ आये, और दो एक हाथ में हंसुआ लिये वहीं बैठे रहे। एक बुड्ढे मज़दूर ने कहा—"इस गेहूं को मैं नहीं काटूंगा—सभी को तो लड़का है।"

रामसुन्दर, क्या तुम्हें कोई बेटा नहीं है? इस निरक्षर मज़दूर को जो धर्म से भय है, वह यदि तुम्हें रहता, तो तुम कभी इस विधवा का सर्वनाश नहीं करते!

रामसुन्दर ने देखा, कि जब तक छोकड़ी को यहां से अलग नहीं हटाया जायगा, तब तक सुविधा के साथ गेहूं नहीं काटा जा सकता है। एक दो बार मज़दूरों पर हुक्म चलाया—"साले, तुम लोग क्या मुंह ताक रहे हो? हरामज़ादी को यहां से अभी मार हटाओ।" किन्तु उन में किसी ने उस का शरीर-स्पर्श नहीं किया। रामसुन्दर स्वयं आगे बढ़ने लगे और रमणी के निकट पहुंचते ही कहने लगे—"हट्, यहां से हरामज़ादी, काटने दे गेहूं। मेरे रुपये वसूल हो जाने पर यदि इस में से कुछ बचेगा, तो तुम्हें वह वापस कर दूंगा।"

उस समय बेचारी विधवा अपने मृत पति और भगवान् को पुकार २ कर रो रही थी। रामसुन्दर के चरण को निकट में पा कर अपने दोनों हाथ से उसे ही पकड़ लिया, और बार २ बड़ी कातरता के साथ उन से करुणा-भिक्षा मांगने लगी। रामसुन्दर केवल "छोड़ पांव, उठो, निकलो इस खेत से" इसी प्रकार की बातों से

अपनी नीचता का परिचय देने लगे। माता की अवस्था देख यादव, माधव दोनों पुत्र उस की बग़ल में खड़े हो रोने लगे।

इस दृश्य को देख कर मज़दूरों में दो एक मज़दूरों की आंखों से आंसू गिरने लगे। रामसुन्दर छोड़ने वाले जीव नहीं! बार २ उन्हें पुकारने लगे—"आओ न साले, बेवकूफ़ की तरह खड़े क्यों हो?" दो एक मज़दूरों के आगे बढ़ते ही धनञ्जय की स्त्री फिर ज़ोर से रोने और चिल्लाने लगी। रामसुन्दर से अब सहा न गया। मर साली कह कर ही पांव से खड़ाऊं निकाल उस असहाया विधवा पर विषम प्रहार करने लगे। रमणी की पीठ फूल गयी। उसके कान से रुधिर बहने लगा, तथापि वह गेहूं की बात न भूल सकी। बड़ा लड़का यादव उसके पास आ कर रोने लगा और बोला—"मां अब गेहूं का कोई काम नहीं, चलो, हमलोग घर चलें, तुम्हें बहुत मार पड़ी!"

जिस बुड्ढे मजदूर ने पहले कहा था, कि इस गेहूं को मैं नहीं काटूंगा, वह इस दृश्य को देख कर वहां से भाग गया।

धनञ्जय की स्त्री एक दो बार चोट की जगहों पर हाथ फेर ज़मीन से उठी, और फिर रामसुन्दर की ओर आगे बढ़ने लगी। उसके दोनों लड़कों ने उसे बीच ही में पकड़ कर कहा—"उस की ओर अब मत जा मां, वह फिर तुम को मारेगा।" रमणी उन्हें हटा फिर आकर रामसुन्दर के पांव पर गिर पड़ी और रोती हुई कहने लगी—"आप मालिक हैं, मारा है, बहुत अच्छा किया है—वह मार नहीं है, आशीर्वाद है, किन्तु मेरे गेहूं न लीजिये—यही तो थोड़ा

सा अन्न है, इसे भी आप ले लेंगे, तो मैं अपने इन बच्चों को क्या खिला कर जिलाऊंगी ? एक बार इन की ओर देखें।"

रामसुन्दर ने इस वार रमणी पर प्रहार नहीं किया; किन्तु बार बार मज़दूरों को गेहूं काटने के लिये उत्साहित करने लगे। इसी समय रामसुन्दर के मकान से उनका निठुर प्यारा अबदुल आ पहुंचा। रामसुन्दर ने एक मज़दूर को भेज कर अबदुल को बुलवाया था। अबदुल ने आते ही मज़दूरों में से एक के हाथ से हंसुआ ले लिया, और उन्हें बुला कर आप भी गेहूं काटने के लिये आगे बढ़ा। असहाय रमणी फिर रोकने गयी, किन्तु अबदुल ने उसे ऐसी अकथ्य भाषा में गाली देना आरम्भ किया, और हथियार हाथ में ले उसके सामने इस प्रकार बीभत्स और कुत्सित अंग भंगी करने लगा कि जिस से धनञ्जय की स्त्री वहां ठहर न सकी। अबदुल के स्वभाव को उस गांव वाले भली भांति जानते थे। विधवा केवल एक वार रामसुन्दर की ओर देख कर "मालिक इसी को इन्साफ़ कहते हैं ?" कह कर अपने दोनों लड़कों को साथ ले अपने घर की ओर चली गयी। जाने के समय कहती गयी— "कल मैं इस गेहूं को कटवाती, गांव के दश आदमियों के यहां जा कर कहने सुनने से सभी अपने २ घर से खा कर इस मेरे गेहूं को मेरे लिये काट देने को प्रस्तुत थे, आज उसी गेहूं को ये सब अपने लिये काट ले गये। भगवान्, त्रिलोकीनाथ, इस ग़रीब का तुम्हारे सिवाय और कौन है ? तुम्हीं इस का विचार करो।"

जगदीश, मनुष्य के प्रति मनुष्य के इस अमानुषिक अत्याचार से क्या तुम्हारा सिंहासन नहीं हिलता ? यदि हिल जाता है, तो

क्यों नहीं मनुष्यों को यह समझने की बुद्धि देते? अनाथा विधवा का और उस के असहाय दोनों लड़कों के मुख का आहार छीन लेने के कारण रामसुन्दर और अबदुल के शिर पर इसी गेहूं के खेत ही में क्यों नहीं वज्र गिरा?

अबदुल को सिखा-पढ़ा कर रामसुन्दर माला खटखटाते मकान की ओर लौटे।

—:o:—

सत्रहवां परिच्छेद।

धनञ्जय की स्त्री ने गांव के कई आदमियों के पास जा कर रोदन किया, और अपने ऊपर जो अत्याचार हुआ था, उस को कह सुनाया; गांव में ऐसा एक भी आदमी नहीं था, जो रामसुन्दर के विरुद्ध उस की सहायता करे। उस की अवस्था देख सभी दुःखित हुए; किन्तु रामसुन्दर के विरुद्ध कुछ मुंह खोले, ऐसी किस की हिम्मत है?

बलिया से नज़दीक ही एक गांव में धनञ्जय की ससुराल थी। पहले ही कह आये हैं कि धनञ्जय को एक साला था। रमणी ने कोई उपाय न देख भाई के पास जाने को स्थिर किया, और जिस दिन उस के गेहूं काटे गये, उस के दो ही दिन के बाद वह अपने मैके जा पहुंची। भाई, उस के मुख से रामसुन्दर के अत्याचार का विवरण सुन और उस के शरीर पर प्रहार का चिन्ह देख बड़ा व्यथित हुआ। उसने बलिया के एक मुख्तार से पूछा कि ऐसे अत्याचार का क्या कोई प्रतिकार नहीं है? मुख़्तार ने उस से उस

की बहन को बुला लाने के लिये कहा। दूसरे दिन धनञ्जय की स्त्री अपने दोनों लड़कों को ले बलिया के उसी मुख़्तार साहब के डेरे पर आयी।

मुख़्तार साहब सहृदय थे। रमणी के शरीर पर निष्ठुर प्रहार के चिन्ह देख और उस के मुख से घटना का विवरण सुन उन के प्राण में बड़ी गहरी चोट बैठी। उन ने कहा—"आज ही दरख़्वास्त दो। तुम्हारा एक पैसा भी नहीं लगेगा। इस मुक़द्दमे में जो ख़र्च पड़ेगा, वह सब मैं दूंगा।"

रमणी ने एक दीर्घ निःश्वास ले अपनी असहाय अवस्था और नीरव कृतज्ञता दिखलाई। उसी दिन फ़ौजदारी में नालिश हुई। हाकिम ने रामसुन्दर और अबदुल के नाम समन जारी किया।

रामसुन्दर ने स्वप्न में भी ऐसा ख़याल नहीं किया था, कि धनञ्जय की विधवा-पत्नी कभी उन के नाम नालिश कर सकेगी। यदि करेगी, तो केवल भगवान् के पास नालिश करेगी। राज-द्वार जाने की उसे सामर्थ्य कहां? सहसा समन पा कर उन की आंख खुली। दो तीन वार समन को बड़े ग़ौर से देखा भाला; देखा, सचमुच यह बलिया के डिप्युटी मजिस्ट्रेट के इजलास का समन है। रामसुन्दर को भय हुआ। पापी के मन में सदा भय रहता है। सब से अधिक भय पापी को, उस की मृत्यु के समय होता है; क्योंकि मनुष्य के साथ चाल चल कर मनुष्य निकल जा सकता है, मनुष्यों को चुटकी पर ले सकता है, अनेक दुष्कार्य मनुष्यों के परोक्ष में किये जा सकते हैं, किन्तु मृत्यु के बाद जिस स्थान में जाने की बात है, वहां चोट्टेबाज़ी का कारबार नहीं है। कुछ भी

छिपाने का कोई उपाय नहीं है। इसी से उस सर्व-साक्षी सर्व शक्ति-मान् के दण्ड की बात स्मरण कर पापी बड़े ही शङ्कित और अनु-तप्त हो जाते हैं। क्या रामसुन्दर जैसे आदमी को मरने के पहले ही कई बार भय नहीं होता है?

रामसुन्दर को एक यही भरोसा है कि हरामज़ादी गवाही नहीं दे सकेगी, मुक़द्दमे को पहली तारीख़ में उन ने अबदुल को हाज़िर कर दिया, अपने हाज़िर नहीं हुए। किन्तु वादी के मुख़्तार ने प्रार्थना कर उनके नाम वारन्ट जारी कराया। अब ग़ैर हाज़िर रहने में खैरियत नहीं, यह सोच कर रामसुन्दर दूसरे दिन उपस्थित हुए।

रामसुन्दर ने वहां देखा, कि वादी की ओर से गवाही देने के लिये वही बुड्ढा मज़दूर आया है। यही व्यक्ति उनका व्यवहार देख वहां से हसुआ ले भाग आया था। उसे देखते ही रामसुन्दर भीतर ही दहल कर रह गये। रामसुन्दर यह नहीं समझ सके कि वह यहां कैसे आया। वह रामसुन्दर की प्रजा या दाव-पेंच का आदमी नहीं है। रामसुन्दर के मुख़्तार ने उन्हें समझा दिया था कि इस तरह के मुक़द्दमे में हाकिम का विश्वास हो जाने पर केवल मुद्दई के इजहार पर वे आसामी को दण्ड दे सकते हैं। यही सुन कर रामसुन्दर के देवता कूच कर गये थे। गवाह देख कर उन को घिग्घी बंध गयी।

मक़द्दमा आरम्भ हुआ। मुद्दई अपना इजहार देते २ रो पड़ी। अपनी पीठ पर खड़ाऊं के दाग़ दिखा कर उस ने रामसुन्दर को दिखला दिया। थोड़ी देर तक आसामी के मुख़्तार भी उस से

जिरह नहीं कर सके। उस स्त्री की बातें सुन इन का भी कलेजा भर गया था। मुवक्किल के बहुत कहने सुनने से वे उठे। किन्तु जितना ही जिरह करते थे, उतना ही देखते थे कि वादिनी के उत्तर से उस के अभियोग की सत्यता और दृढीभूत होती जाती है। इस के बाद वही मजदूर और धनञ्जय का छः बरस का लड़का यादव ने आ कर गवाही दी। हाकिम ने रामसुन्दर और अबदुल के नाम से अभियोग कर पूछा, वे कोई सफ़ाई का गवाह देंगे? रामसुन्दर के मुख़्तार ने उन्हें पहले ही से सफ़ाई का गवाह देने से निषेध किया था; किन्तु रामसुन्दर ने उस पर कुछ ध्यान नहीं दिया। अबदुल के समान कितने ही लोगों ने उन्हें सफ़ाई का गवाह देने को बाध्य किया था। इन ने दश बारह गवाहों का नाम लिखवाया। रामसुन्दर के मुख़्तार ने ४, ५ गवाहों की गवाही होने दी। इस के बाद रामसुन्दर जितनी देर तक कठघरे में रहे, उतनी देर तक मन हो मन इष्ट मन्त्र का जप करते रहे।

भगवान्, इस बार बचा दो, ऐसा काम अब से फिर न करूंगा, मन ही मन ये सब बातें भी उनने कहीं या नहीं कौन जाने?

सवाल जवाब होने के बाद हाकिम राय लिखने बैठे, रामसुन्दर मन ही मन जप करने लगे। थोड़ी ही देर के बाद हाकिम ने आसामियों को हिन्दी में राय समझा दी। उस का मर्म्म यह था—“इस मुकद्दमे में मुद्दई का ही इज़हार काफ़ी है। उस की सरल बातें और शरीर के प्रहार के चिन्ह ही सौ गवाह के बराबर हैं। गेहूं उस के स्वामी का बोया था, इस में मुझे ज़रा भी सन्देह नहीं है। आसामियों ने एक अनाथा विधवा पर जो अमानुषिक

अत्याचार किया है, उस पाप का प्रायश्चित्त लघुदण्ड से होने का नहीं। रामसुन्दर को सपरिश्रम तीन मास का कारावास और सौ रुपये जुर्माना तथा अबदुल को एक वर्ष कारावास का दण्ड होता है। इस में एक मास निर्जन कारागार वास करना होगा। अर्थदण्ड न देने पर रामसुन्दर को और दो मास जेल में रहना होगा। जुर्माने के रुपये में से ५०) रुपये मुद्दई को उसकी घटी पूरी करने के लिये दिये जायं।"

रामसुन्दर थोड़ी देर के लिये इष्ट मन्त्र भूल गये। उनका कलेजा सूख गया। गेहूं काटने के मामले में ऐसा कठिन दण्ड मिलेगा, इसका उनने कभी ख़याल भी नहीं किया था।

और वह दण्ड भी एक अनाथा विधवा के नालिश करने पर! जेल में जाते समय रामसुन्दर सोचने लगे, अन्तिम समय में यह कलङ्क लगने को लिखा था! भगवान् को इतना पुकारा; पर सब व्यर्थ हुआ।

रामसुन्दर, दुःखिनी विधवा क्या भगवान् के विश्वराज्य की प्रजा नहीं है? उसने निष्पाप हृदय से पुकारा था!

अठारहवां परिच्छेद।

रामसुन्दर ने अपने और अबदुल के प्रति जो दण्डाज्ञा हुई थी, उस के विरुद्ध सेशन जज के पास अपील की; किन्तु उससे जब कुछ लाभ नहीं हुआ, तब हाईकोर्ट में मोशन किया। किन्तु वहां से भी उन्हें कुछ फल न मिला। रामसुन्दर को उतने दिन तक जेल रहना

ही पड़ा। रामसुन्दर ने तो शारीरिक और मानसिक मर्मान्तिक कष्ट भोग किया। महकमे के जेल में कुछ दिन रह कर रामसुन्दर को सेन्ट्रल जेल में आना पड़ा। वहां जाति बचाने अथवा इष्ट देवता का नाम लेने का अवसर बहुत कम मिलता था; किन्तु जेलर बाबू के अनुग्रह से अथवा रामसुन्दर के धन के बल से उन्हें कोई विशेष परिश्रम का काम नहीं करना पड़ता था। रामसुन्दर के ज़िम्मे रोशनी जलाने और मकान साफ़ करने का काम था।

जहां तक हो सकता था, रामसुन्दर, अबदुल की आंखें बचा इन सब कामों के करने की कोशिश करते थे; किन्तु जैसे ही वे लालटेन लेकर बैठते, तभी उन्हें मालूम होता कि अबदुल आ रहा है। जेल से निकलने का समय जितना ही पास आने लगा, रामसुन्दर की "किस प्रकार लोगोंको मुख दिखलाऊंगा?" यह भावना उतनी ही बढ़ने लगी।

सदा के लिये अपना देश ही त्याग देने की उनकी एक दो वार इच्छा हुई थी; पर फिर पीछे सोचा—"वहां ऐसा आदमी ही कौन है, जिसे देख कर लज्जा हो? सभी तो खेतिहर हैं! जिन्हें देख कर लज्जित होना था वे सब से पहले ही वहां से खसक गये हैं। हां एक देवशरण है, वह तो मेरे इशारे पर नाचने वाला है।

जेल से निकल कर रामसुन्दर अपने घर लौटे। उनके घर आने के कुछ ही काल बाद देवशरण आ पहुंचे। रामसुन्दर ने साष्टांग दण्डवत् कर बैठने का अनुरोध किया। देवशरण के बैठने पर रामसुन्दर ने कहना आरम्भ किया—"ये सब ग्रह के फेर हैं!"

देवशरण— सरकार ग्रह का फेर नहीं तो और क्या है? ग्रह

के हाथ से छुटकारा पाना सर्वथा असम्भव है। परम धार्मिक राजा नल ने शनि के कोप में पड़ कर कैसा २ भोग भोगा था। इसी से लोग ग्रहों की शान्ति के लिये उपाय करते रहते हैं।

राम०—प्रतिदिन सन्ध्या के समय आकर मुझे पुराण सुना दिया करें। आज कल मन बहुत उदास रहता है।

शर्म्मा—अवश्य सुना दूंगा। पुराण के श्रवण कीर्त्तन से बढ़ कर श्रेष्ठ काम इस संसार में और क्या है?

रामसुन्दर—और (चारों ओर देख कर) यहां तो और कोई नहीं है—मन में विचार किया है, कुछ प्रायश्चित्त करने का।

शर्म्मा—उत्तम विचार है, बहुत उत्तम विचार है।

राम०—जान बूझ कर तो मैं ने कोई अनाचार नहीं किया है। तौभी कौन ठिकाना—जेल ख़राब जगह है और संसर्ग दोष भी तो लग सकता है।

शर्म्मा—ज़रूर लगेगा-मेरे वृद्ध प्रपितामह कहा करते थे, संसर्गजा दोष गुणा भवन्ति। संसर्ग दोष लगतेही उसका प्रायश्चित्त करना आवश्यक है। तो मैं उसकी व्यवस्था ठीक कर देता हूं कि क्या २ ख़र्चा लगेगा, जिस में काम किफायतसारी से हो, वही यत्न करूंगा।

राम०—जी हां, इस समय हाथ बहुत ख़ाली पड़ रहा है। अपना ही मन नहीं मानता, इसी से, नहीं तो इस गांव में किस की हिम्मत है, जो मेरे विरुद्ध ज़बान हिलावे?

शर्म्मा—यह तो ठीक ही है। पर जब आप ने वैसा विचार किया है, तब शुभस्य शीघ्रम करना चाहिये।

राम०—आप एक फिहरिस्त तयार कर दें, मैं अभी से इस काम में लगता हूं।

शर्म्मा—कल भोरे फ़िहरिस्त दे जाऊंगा।

इस प्रकार बातचीत होने के बाद देवशरण वहां से उठ गये और दूसरे दिन प्रातः काल ही फिहरिस्त लाकर रामसुन्दर के सामने रख दिया। खर्च मंजूर हुआ। प्रायश्चित्त की सभी वस्तुएं खरीदी जाने लगीं।

रामसुन्दर के प्रायश्चित्त में देवशरण शर्म्मा को ही सब से अधिक प्राप्ति हुई। गांव के स्वजातीय लोगों ने भी एक शाम भोजन किया।

रामसुन्दर ने प्रायश्चित्त किया सही; किन्तु एकवार भी उन के मन में यह विचार नहीं हुआ कि धनञ्जय की विधवा स्त्री को और उसके दोनों नाबालिग लड़कों को बुलवा कर उसके खेत और मकान लौटा दें। देवशरण या और किसी ने ऐसी राय नहीं दी।

रामसुन्दर ने दो दिन के बाद ही फिर लोगों पर अत्याचार करना आरम्भ किया; किन्तु इस वार पहले से कुछ सतर्क होकर और फ़ौजदारी का डर रख कर काम करने लगे।

भारत के कितने दिहातों में फ़ौजदारी का डर रख कर भी ऐसे अनेक काम किये जा सकते हैं, जिनसे थोड़े दिन के भीतर ही मनुष्य बड़ा आदमी हो जा सकता है।

महाजन बन कर रामसुन्दरने अनेक कृषकोंको रास्ते का भिखारी बना दिया। वे लोगों को हाथ से न मार कर पेट की ज्वाला से

मारने लगे। किसी के खेत-बागीचे, किसी के गाय-बैल, किसी के घर-द्वार उन के हस्तगत होने लगे। भारत के कृषकों के समान निर्दोष,निरीह और सहिष्णु जाति पृथ्वी में और कहीं नहीं है। इन्हीं के परिश्रम से देश के सभी लोगों का पेट भरता है, इतने पर भी येही भूखे मरते हैं। ज़मींदार विशेष कर महाजन के चूसने से इन के शरीर में एक बून्द रुधिर भी नहीं रहता। तौभी ये रोते नहीं। चुपचाप सब अत्याचार सह्य करते हैं—धरि कपोतब्रत रहैं सदा रुख देखत निज प्रभु आन। भारत में रामसुन्दर के समान महाजन कहां नहीं हैं? किन्तु ऋण का सैकड़े ३७॥) रुपये वार्षिक और गेहूं का सैकड़े वार्षिक ५० मन हिसाब से चक्रवृद्धि के नियम से वृद्धि अदाय कर सन्तुष्ट रहने से भारतीय प्रजा महाजन के विरुद्ध कुछ भी चीं-चपड़ नहीं करती। रामसुन्दर को गेहूं और रुपये दोनों का कारबार था। जिस साल गेहूं बहुत महँगा होता था, उस साल आग के भाव से गेहूं बेंचते थे। और गेहूं की दर मन्द पड़ जाने पर वे गेहूं को ऋण स्वरूप देते थे।

रुपये के सूद में भी वे सुअवसर पाने पर उस को हाथ से नहीं जाने देते थे—चक्रवृद्धि अदाय करते थे। तीन मास, छः मास, अथवा एक वर्ष के बाद ही से सूद का भी सूद वसूल करने लगते थे।

रामसुन्दर ने अपने कच्चे मकान को पक्का बनाना आरम्भ किया; किन्तु उन के पर लोक का स्थान मालूम होता है, दिनो दिन कच्चा होने लगा।

—:o:—

उन्नीसवां परिच्छेद ।

रामसुन्दर के धन की वृद्धि होती थी सही; किन्तु मन की शान्ति क्रमशः कम होती जाती थी। शान्ति उन के अन्तःकरण में किसी दिन थी या नहीं इस में सन्देह है। पर, इस समय उन के हृदय में अशान्ति की अत्यन्त वृद्धि हो रही थी, इस में कुछ भी सन्देह नहीं। रामसुन्दर के मन में सर्वदा एक न एक खटका लगा रहता था। जेल से लौट आने के बाद से उन का भय और बढ़ गया था। नज़दीक के पुलिस की पूजा की मात्रा बढ़ा दी गयी थी। गांव में एक भी कान्स्टेबल के देखते ही उन के देवता कूच कर जाते थे; उन के मन में सन्देह होता कि फिर मेरे नाम से तो वारन्ट नहीं जारी हुआ है! फलतः मकान में रह कर भी वे सर्वदा कैदी के समान शान्तिरहित अवस्था में रहते थे।

क्षण क्षण पर उन के अन्तःकरण में अनुताप हो जाया करता था। किन्तु वह अनुताप क्षणिक रहता था। मन की जिस अवस्था से अन्यायआचरण या पापकार्य्य से विरक्ति उत्पन्न होती है, रामसुन्दर के मन की वह अवस्था कभी नहीं हुई। मन की अशान्ति से कभी कभी सोचते—अब इस प्रकार किसी के साथ चोट्टे-बाज़ी नहीं करूंगा, और न उत्पीड़न करूंगा। परन्तु अवसर पाते ही वे अपनी यह प्रतिज्ञा भूल जाते थे। राम सुन्दर के कामों में मीनमेष करने वाला, या उन की इच्छा को रोकने वाला उस गांव में कोई नहीं था। ऐसे समय यदि त्रिलोचन दास रहते, तो मालूम होता है, रामसुन्दर जिस अवस्था में आ पड़े

थे, उस अवस्था में उन का स्वभाव बहुत कुछ संशोधित हो सकता। सामने सच्चरित्र का आदर्श, हृदय में शासन का भय, रहने से मनुष्यों का बड़ा उपकार होते हुए देखा गया है। हम चारों ओर देखते हैं, जिन के पास रुपये हैं, पर कोई हांकदाब रखने वाला नहीं है, तो उन का चरित्र उच्छृङ्खल हो जाता है, फिर उच्छृङ्खल हो जाने पर परिवर्तन को आशा नहीं रहती। इस का कारण यह है कि संसार में नोचों को संख्या अधिक है। उक्त प्रकार का एक मनुष्य देखते ही नीच चारों ओर से आ कर उसे घेर लेते हैं, और उसे बुरे बुरे कामों की ओर प्रेरित करते हैं। गांव में आ कर देवशरण, गोपाल, अबदुल प्रभृति के समान चिकनी चुपड़ी बातें बनाने वालों की संगत नहीं होती, तो रामसुन्दर कदापि इस प्रकार ग़रीबों पर अत्याचार नहीं करते। लाला साहब और त्रिलोचन से वे बहुत डरते थे। उन्हें वहां से हटा कर रामसुन्दरने अपने पांव में आप कुल्हाड़ो मारो है, यह उन्हों ने नहीं समझा। हमने जो ऊपर शासन भीति की बात कही है, वह अपने गुरुजनों या बराबर वालों ही से होती है। संसार में चरित्र का मूल्य और बल इतना अधिक है, कि बराबर वाले के चरित्रवान् होने पर चरित्रहीन मनुष्य उस के सामने आने में डरते हैं। दुःख का विषय है कि निम्न श्रेणी के चरित्र-वान् होने पर उस से भय नहीं होता। रामसुन्दर के दरिद्र पड़ोसियों और प्रजाओं में कितने चरित्रवान् थे, किन्तु निम्नश्रेणी के होने के कारण वे रामसुन्दर के कामों की आलोचना केवल गुप्त रूप से अथवा मन ही मन करते थे। रामसुन्दर का इस से क्या होता जाता है ?

धीरे २ ग़रीबों के शाप का फल फलने लगा। रामसुन्दर की ऐहिक उन्नति का स्रोत सदा के लिये रुक गया। पहले कह आये हैं कि जेल से लौटने के बाद से रामसुन्दर बड़ी सतर्कता से काम करते थे। उस के दूसरे वर्ष वर्षा ऋतु में उन ने पाट का कारबार करने का विचार किया। इस के दो तीन वर्ष पहले ही से इनके गांव के पास के गांव का एक आदमी पाट का कारबार करता था, उसी में उस को बहुत लाभ होते देख रामसुन्दर ने भी इधर ध्यान दिया।

और लोगों ने जितना पाट जितने मूल्य पर ख़रीदा, रामसुन्दर ने उतना पाट उस के आधे मूल्य पर ख़रीदा। अनेक कृषकों को झांसा पट्टी दे कर उन से थोड़े मूल्य पर अधिक पाट लिया। पन्द्रह हज़ार रुपये में रामसुन्दर ने लगभग पच्चीस हज़ार रुपये का पाट लिया। रामसुन्दर के मकान के पास ही गंगा हैं। महाजन आकर उन्हीं के यहां से पाट ख़रीद ले जायंगे, इस विचार से उन ने समस्त पाट अपने गृह की बगल ही में एक गुदाम में सजा कर रक्खा। पाप की नाव पूरी हो जाने के कारण ही एक दिन रात में आग लगने से रामसुन्दर का सब पाट और उन के गृह का भी अधिकांश जल कर ख़ाक हो गया। पापार्जित अर्थ, प्रायः निःशेष हो गया, रामसुन्दर के मनमें बड़ी गहरी चोट बैठी।

इसी समय उन्हें अपनी स्त्री की बात याद आयी। प्रायश्चित्त के समय भी उन ने स्त्री की खोज ख़बर नहीं ली। कन्या भी अपनी मां के साथ थी। घर जल जाने से रामसुन्दर का मन एक

दम टूट गया, उन ने स्त्री और कन्या को बुलाने के लिये ससुराल आदमी भेजा।

रामसुन्दर की गृहिणी पति से परित्यक्त होने पर भी इस के पहले ही स्वामी के यहां आने को प्रस्तुत थीं; किन्तु रामसुन्दर ने अबतक उन की कुछ खोज ख़बर नहीं ली थी, इसी से स्वाभाविक अभिमान के बस हो, नहीं आ सकीं। सम्प्रति रामसुन्दर की विपद् सुन कर उन ने कृपालपुर आने में विलम्ब नहीं किया; किन्तु रामसुन्दर के भाग्य में उस साध्वी रमणी के संग का सुखभोग नहीं लिखा था। रामसुन्दर की स्त्री नाव से आ रही थीं, रास्ते में भयङ्कर तूफ़ान ने इन लोगों पर आक्रमण किया। नाव जल-मग्न हो गयी। साथ ही साथ सती ललना ने पति-पुत्र को छोड़ कर कन्या के साथ गंगा के गर्भ में आश्रय ले लिया।

रामसुन्दर के भेजे हुए आदमी की जान किसी प्रकार बच गयी। उस ने लौट कर उस शोकसंवाद को कह सुनाया। पाषाण हृदय रामसुन्दर का भी हृदय चूर २ हो गया। रामसुन्दर अब संसार को अन्धकारमय देखने लगे।

इसी समय उनका एकमात्र पुत्र-उन्हें सान्त्वना देना तो अलग रहे, 'उनकी शोकाग्नि में और घृताहुति देने लगा। इस लड़के की भक्ति अपनी माता के ऊपर असीम थी। तुम्हारे ही पाप से मेरी माता और बहन की यह अकालमृत्यु हुई है, कह कर उन के जले पर लवण छिड़कने लगा। माता का जिस दिन श्राद्ध था, उस दिन बिना किसी से कुछ कहे न मालूम कहां चला गया।

बीसवां परिच्छेद ।

रामसुन्दर का लड़का श्राद्ध के दिन घर नहीं आया। सब काम अकेले रामसुन्दर ही को देखना पड़ा। रामसुन्दर कुछ २ समझ गये थे कि लड़के की राय माता के श्राद्ध करने की नहीं है; किन्तु देवशरण शर्म्मा पर इस बात को प्रकट नहीं होने दिया। श्राद्ध के दो तीन दिन बाद ही लड़का घर लौट आया। राम सुन्दर उस को गुप्त रूप से डांटने-मारने लगे, किन्तु वह उनके हाथ से बहुत दूर निकल गया था, रामसुन्दर के शासन का फल कुछ नहीं हुआ। वह पिता की बातों को खूब धड़ल्ले से काट-छांट करने लगा। आज तक रामसुन्दर, जिस के लिये डरते थे, आज वही हुआ। उन के लड़के का हिन्दू धर्म पर ज़रा भी प्रेम नहीं है, इस से धार्मिक रामसुन्दर के हृदय में बड़ी गहरी चोट बैठी।

एक समय लाला साहब के लड़के की एक दो त्रुटियों का वर्णन कर देवशरण शर्म्मा के साथ उनकी खूब हंसी उड़ायी थी, और उन के पुत्र व्रजगोपाल को बहुत भला-बुरा कहा था। एक दिन इनने कहा था कि व्रजगोपाल जैसे लड़के को नदी में काट फेंकना चाहिये। इस समय अपने पुत्र को क्या करें, इसी बात को लेकर वे बड़े सात-पांच में पड़े। लड़के को, पढ़ने के लिये क्यों कलकत्ते भेजा? यही कह कर वे अपने आप को धिक्कारने लगे। गृह का जलना, पत्नी-वियोग, कन्या की मृत्युप्रभृतिकी अपेक्षा पुत्र का धर्म-त्याग हो उन के सामने एक विषम समस्या हो गयी।

सब से बढ़ कर अड़चन तो यह है कि अपने एक मात्र सुहृद् शर्म्मा जी से भी यह बात छिपा रखनी पड़ेगी।

किन्तु रामसुन्दर छिपानेकी जितनी चेष्टा करें, लड़का इस बात के भी छिपाने की कुछ चेष्टा नहीं करता था। रामसुन्दर से जिस सन्तान को उत्पत्ति है उस में सद्‌गुण की आशा रखना ही अन्याय है। माता की मृत्यु के बाद ही लड़का मानो पगला हो गया। जिस कार्य्य से पिता को कष्ट हो, वह जान-बूझ कर वही कार्य्य करने लगा। शास्त्र में जो लिखा है "पुत्रे यशसि तोयेच नराणां पुण्य लक्षणम्" वह अन्वर्थ हुआ।

रामसुन्दर के पुण्य का लक्षण पुत्र से प्रकाशित हुआ। रामसुन्दर बड़ी विपद् में पड़े। हिन्दू-धर्म का ढकोसला ही उन की एकमात्र सम्पत्ति थी। त्रिलोचन के समान वे वास्तविक धार्मिक नहीं थे। उसी धर्म का ढकोसला रखने के लिये एकमात्र पुत्र को गृह से बहिष्कृत करना होगा। नहीं, बहिष्कृत करने से लोगों से कैसे मुंह दिखलायंगे? इसी से कहते हैं कि रामसुन्दर के सामने इस समय बड़ी विषम समस्या उपस्थित हुई।

रामसुन्दर बाहर बैठ कर इसी विषय में सोच रहे थे, इसी समय शर्म्मा जी आ पहुंचे। रामसुन्दर के लड़के की बात चली। रामसुन्दर अपने ही से समझाने लगे—देखो, वह सब, कुछ नहीं है। मैं भलीभांति जानता हूं कि धर्म पर उस की बुद्धि है, देवता, ब्राह्मण में उसकी भक्ति है। पर उस को मृत्यु से इसे बहुत शोक हो गया है, वह इसे बहुत प्यार करती थी! अबतक दिन भर रोता है।

शर्म्मा—मैं यह सब समझता हूं; पर गांव के लोग ऐसा समझें तब तो! आप के ऊपर लोगों की जो श्रद्धा-भक्ति है, आप की धार्मिकता ही उस की जड़ है।

राम०—यह बात मैं अपने मुख से कैसे कह सकता हूं? इसी प्रकार यह सब निभ जाय तो जानूं। भगवान् ने इस अन्तिम समय में मुझे बड़ी विपद् दी।

शर्म्मा—यह सब अपने मन में भूल कर न लाइये। धर्मस्य सूक्ष्मा गतिः।

राम०—यह आप ठीक कहते हैं। सीताराम! सीताराम!!

रामसुन्दर का लड़का बग़ल में खड़ा हो ये सब बातें सुन रहा था। सहसा क्या सोच कर वह भीतर मकान में चला गया। थोड़ी देर बाद वहां से लौट आकर वह बाहर के एक उजड़े घर में खड़ा हो गया। एक मुसलमान मज़दूर उसी घर के छप्पर को छाने में लगा था। रामसुन्दर का लड़का जहां आकर खड़ा हुआ वहां से रामसुन्दर और देवशरण शर्म्मा दोनों आदमियोंको भलीभांति देखा जा सकता है और उन के साथ बात-चीत भी की जा सकती है। उस ने उस मुसलमान मज़दूर को बुलाया; उस के छप्पर पर से उतर कर आने पर उस के कंधे पर एक हाथ रख कर वह खड़ा हो गया, और दूसरे हाथ से अपने कोट के पाकेट से कुछ भात निकाल कर देवशरण शर्म्मा को बुलाया। उसी भात को खाने लगा और उन से कहने लगा—"शर्म्मा जी महाराज! यह देखिये, बाबू जी के धर्म में हमारा कैसा विश्वास है। ढकोसला बढ़ाने से क्या होता है? मैं इन सब ढकोसलों से बहुत दूर रहता हूं।

लड़के का यह व्यवहार देख उन का दिमाग़ चकरा गया। वे यह कुछ भी स्थिर नहीं कर सके, कि मैं अब क्या करूं और क्या कहूं।

देवशरण शर्म्मा—"नारायण, नारायण, घोर अन्धेर, घोर कलिकाल" कह उठे। इसी समय रामसुन्दर ने कहना आरम्भ किया—"अरे, नारायण, नारायण, अन्धेर! कलिकाल! यह सब क्या कर रहे हैं? देखते नहीं, वह पगला हो गया, उसे बांधिये, जल्द बांधिये। गुलामअली उसे बांध रक्खो।" जिस मज़दूरे के कन्धे पर हाथ रख कर रामसुन्दर के बबुआजी विचित्र कृत्य कर रहे थे, उस का नाम गुलामअली था।

गुलामअली को सहसा उसे बांधने की हिम्मत कैसे हो सकती है?

रामसुन्दर का पुत्र कहने लगा—"पगले तुम हुए हो, मैं क्यों पगला होऊंगा?

रामसुन्दर बरनै लगे—"अरे कुलाङ्गार! अभी मेरे सामने से अलग हटो।"

इतना उस से कह कर शर्म्मा जी की ओर हो, बोले—"कई दिन पहले से इस का पता मुझे लग गया था, कि इस का दिमाग़ ख़राब हो गया है। आप से कहने कहने करता था, पर नहीं कह सका। भगवान् अन्तिम समय में मुझे यह सब दिखावेंगे, यह नहीं मालूम था।

शर्म्मा—उन्माद का लक्षण तो स्पष्ट ही है। इसी समय इस को चिकित्सा का कोई अच्छा प्रबन्ध करना चाहिये।

राम०—ऐसे लड़के के लिये दवा! ऐसा लड़का रहा या गया!

शर्म्मा—ऐसी बात नहीं कहिये। अत्यन्त शोक से उस को यह दशा हो गयी है। जरा सा ज्ञान होते ही मैं उसे उपदेश देकर अच्छा कर दूंगा।

देवशरण विदा हुए। रामसुन्दर ने देखा कि पुत्र के पगला हो जाने की बात लोगों में फैला देने के सिवाय लोगों को मुख दिखाने का दूसरा उपाय नहीं है। किन्तु उसी दिन रात में उनने लड़के के लिये प्रहार-औषध की व्यवस्था की। दूसरे दिन प्रातः काल ही वह मकान से कहीं निकल भागा।

—:०:—

इक्कीसवां परिच्छेद।

मनुष्यों के सुख, स्वतन्त्रता बढ़ाने के लिये संसार में जितने ही नये नये कला-कौशल का आविष्कार होता जाता है, आकस्मिक मृत्युकी संख्या भी उतनीही बढ़ती जाती है। कुछ आदमी मिलकर बलिया की पक्की सड़क पर रोलर खींच रहे थे। इन के साथ दो बालक भी रोलर खींचने में लगे थे। एक की उमर दश और दूसरे की बारह बरस की है। एक ब एक एक विषम शब्द उठा। रोलर का खींचना बन्द हो गया। देखते ही देखते वहां हज़ारों आदमी इकट्ठे हो गये। दश बरस के लड़के का हाथ, रोलर

खींचते २ कुछ शिथिल हो गया था, जिस से रोलर का दण्ड उस ने छोड़ दिया। और लोगों के रोलर रोकते रोकते बालक उस के नीचे दब कर मर गया। उस का शिर चूर चूर हो गया। एक हाथ की हड्डी से मांस और चाम अलग २ हो गया है।

एक क्षण में भाई को सदा के लिये खोकर बारह वर्ष वाला बालक जिस समय चिल्लाकर रो उठा, उस समय रास्ते के हज़ारों आदमी उसे समझाने के लिये वहां आ पहुंचे। पास के बाज़ार में ख़रीद, बिक्री सब बन्द हो गया, बालक जब रोते हुए कहने लगा—"अरे, मेरी मा को हम दोनों भाइयों को छोड़ और कोई नहीं है, मैं कैसे मां के पास जाकर यह कह सुनाऊंगा?" उस समय समागत सभी व्यक्तियों की आंखें आंसू से छलछला आयीं। बालक का रोना सुन कर बाज़ार की कुछ वेश्याएं वहां आ गयी थीं। वे सभी मुंह में रुमाल देकर रोने लगीं। आख़िर ये भी तो मनुष्य ही हैं। पाप-पङ्क में भले ही डूबी रहें किन्तु स्त्री-जन सुलभ कोमलता को हृदय से विसर्जन नहीं किया है।

जो मनुष्य रोलर खींचते थे, उन में एक प्रौढ़ मज़दूर उस लड़के के साथ २ बहुत चिल्ला चिल्ला कर रो रहा था। समागत व्यक्ति उसे मृत बालक का आत्मीय समझ पूछने लगे—"क्यों जी! उस लड़के के और कौन है?" उस ने जवाब दिया—"इस लड़के की एक तो मां और दूसरा यही भाई है, जिसे आप देख रहे हैं। इस के बाप के मर जाने के बाद इस की मां अपने दोनों लड़कों को लिये मेरे गांव में अपने भाई के यहां आकर रहती थी। क़िस्मत की बात है, इस का वह भाई भी मर गया—वह यहीं

एक बाबू के यहां काम करता था। इन सबों का अब कोई नहीं। हां, बेटी, गांव घर के लोगों के यहां कुछ काम कर अपना पेट पालती है। बड़ा लड़का शहर में मेरे साथ काम करता है, आज कुछ दिन से ही छोटे लड़के को भी मैं अपने साथ काम करने को ले आता था। दिन भर काम करने पर =) पैसे कमाता था। आज जन्म भर के लिये माता को छुट्टी कर गया।" मज़दूर अब स्पष्ट रूप से नहीं बोल सका—" उस की मां आकर मुझ को ही पकड़ेगी " कह कर बालक के समान रोने लगा। यह हालत देख सुन कर दर्शकों में अनेक के हृदय भर उठे। मृत बालक की सहायता के लिये सभी कुछ २ देने लगे। वेश्याओं ने पहले रास्ता दिखलाया। उन में किसी ने एक चौअन्नी किसी ने अठन्नी और किसी ने एक रुपया लाकर दिया।

बालक को जब वे देने गयीं तब—मैं रुपये नहीं चाहता, तुम लोग मेरे भाई को बचा दो—कह कर पृथ्वी पर लोट २ चिल्लाने लगा। उसी मजदूर ने इसकी ओर से उन सब रुपयों को ले लिया।

किन्तु दूसरे के लिये दूसरा और कितनी देर तक रो सकता है? बालक के मरने से उसकी मां और भाई की जो क्षति हुई, वह औरों की नहीं। इस से जो औरों का थोड़ा समय लगता है, या कुछ रुपये लगते हैं, वह मनुष्यों की मनुष्यता के कारण। क्रमशः भीड़ हटने लगी। दर्शक अपने अपने काम पर चले गये। मनुष्यत्व विहीन म्युनिसिपैलिटी का एक आदमी आकर रोब गांठने लगा—"यात्री! तुम अपनी लाश यहां से ले जाओ, या यहां से हटो, मैं इसे फेंक दूं।" उसी प्रौढ़ मज़दूर ने उसे विनयपूर्वक

कहा—" उसकी मां को बुलाने के लिये आदमी भेजा है, वह आकर एकबार देख ले, जरा ठहर जाओ, तुम्हें हमलोग नहीं छूने देंगे, हमीलोग इसे यहां से अभी ले जाते हैं। "

इस के थोड़ी ही देर बाद बालक की मां उन्मादिनी की तरह वहां आ पहुंची। उस के क्रन्दन से फिर वहां मनुष्यों की भीड़ लगने लगी, मज़दूरों ने अब उसे वहां ठहरने नहीं दिया। इसी समय पुलिस आकर अपना काम समाप्त कर शव जलाने की आज्ञा दे गयो, मजदूर शव को अपने कंधे पर ले श्मशान घाट की ओर ले चले। माता पीछे २ चली—" ओ बेटा! मुझे छोड़ कर कहां चला? बेटा! मेरे घर में कुछ भी खाने को रहता, तो तुम्हें काम करने के लिये कभी नहीं भेजती! आज जैसे ही तू मकान से चला, वैसे ही अशकुन हुआ था, मेरे लाख रोकने पर भी तू नहीं ठहरा, चला ही आया! फिर घर लौटा नहीं! एक वार मां कहता हुआ, दौड़ कर मेरी गोद में आजा, बेटा! तू क्यों इस राक्षसी के गर्भ में आया? पैसे के लिये तुझे मैं ने मार खाया बेटा! " इसी तरह कितनी ही बातें कह २ कर अभागिनी रोने लगी।

मृत बालक धनञ्जय का छोटा लड़का माधव है, क्या यह पाठकों से अब भी कहने का प्रयोजन है?।

अनाथा असहाया रमणी के संसार के अवलम्ब दो लड़के थे, उनमें एक तो इस प्रकार चल बसा। संसार में किसी के १० वर्ष के लड़के के लिये दास, दासियां लगी हैं। यहां दरिद्र विधवा का दशही बरस का लड़का पेट पालने के लिये युवजनोचित परिश्रम करने के लिये बाध्य हुआ था। रमणी ने इस जन्म में कौन

सा पाप किया है, जिस से पति-शोक, भ्रातृ-शोक और पुत्र-शोक उसे सहने पड़े ? विश्वपिता के विश्वराज्य में ऐसी मृत्यु क्यों होती है, यह कौन कह सकता है ? या बालक इसी दिन मरेगा, यह कौन जानता था ? मङ्गलमय जगदीश्वर मनुष्य के मङ्गलार्थ ही उसे मृत्यु-रहस्य उद्घाटन करने की क्षमता नहीं देते।

बाईसवां परिच्छेद।

इधर पांच छः वर्ष के भीतर रामसुन्दर की अवस्था में बहुत कुछ उलट-फेर हो गया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वे इस समय क्रमशः अवनति की ओर ही जा रहे हैं। अब वह राम-सुन्दर नहीं रहे। एकमात्र पुत्र को उनने पगला कहते कहते सच-मुच ही पगला बना दिया था। दो तीन वर्ष हुए कलकत्ते में उस की भी मृत्यु हो गयी। स्त्री, पुत्र और कन्या से रहित हो कर राम-सुन्दर इस समय अकेले हो गये। थोड़े दिन से उन के शरीर में कुछ रोग दिखाई पड़ने लगा है। रामसुन्दर पञ्चतिक्त प्रभृति कवि-राजी औषध का सेवन करते थे।

रामसुन्दर का प्रिय भृत्य अबदुल जेल ही में अपनी करनी का फल भोग कर गल-पच कर मर गया। गोपाल एक जालसाज़ी में पकड़ा जा कर जेल में गया था, वहां ही एक कुत्सित अपराध करने के कारण सदा के लिये उसे कालेपानी की सज़ा हो गयी।

रामसुन्दर के घर की अवस्था इस समय बड़ी शोचनीय हो गयी है। इस संसार में आत्मीय कहाने वाला अब उन का कोई न

रहा। ऐसा कोई काम अपने जीवन में इन ने किया नहीं, जिस से गांववालों की इन के साथ सहानुभूति हो। उन में भी यदि कोई त्रिलोचन के समान देव-स्वभाव का मनुष्य होता तो अवश्य इनकी इस दशा को देख व्यथित होता। अवस्था देख सुन कर रामसुन्दर के नौकर भी अब उन में न तो वैसी श्रद्धा-भक्ति रखते हैं, और न वैसा डरते ही हैं। महारोग-ग्रस्त होने के कारण भरसक उन के पास भी जल्द कोई नहीं जाता है।

गांव की एक दरिद्र विधवा स्त्री रामसुन्दर के खाने के लिये कुछ बना देती है। किन्तु वह भी यथासाध्य उन के पास नहीं फटकती थी। जब रसोई बनाने का समय आता, तभी वह उन के घर आती थी, नहीं तो यों प्रायः नहीं आती थी। फलतः एक समय के प्रबल प्रतापान्वित, गांव के हर्ता-कर्त्ता-विधाता रामसुन्दर आज-कल जिस असहाय अवस्था में रहा करते थे, वैसी किसी दरिद्र गृहस्थ की भी दशा नहीं थी।

धीरे धीरे रामसुन्दर की आर्थिक दशा भी ख़राब होने लगी। इस समय रामसुन्दर स्वयं घर से बाहर नहीं निकल सकते थे।

अन्याय उपार्जन का मार्ग एकबार ही बन्द हो गया। गांववाले इस समय उन के उचित देन भी प्रायः नहीं देते थे। रामसुन्दर के तीन वार पुकारने पर कोई प्रजा एकवार उन से ज़ा कर भेंट करती थी। रामसुन्दर की बातों में अब वह शक्ति नहीं। विनय पूर्वक कहने पर भी अधिकांश उन की बातों पर कान नहीं देते थे। उनके जीवन का एकमात्र मन्त्र था, अर्थ। मनुष्य के प्रति अत्याचार कर उनने अपने जीवन में जो प्रचुर धन उपार्जन किया था, यदि आग

नहीं लगती, मुक़द्दमा नहीं होता, तो उसी धन से वे राजा की तरह अपना जीवन यापन करते।

किन्तु इस समय उन के पास सञ्चित धन बहुत थोड़ा रह गया था। इसी से प्रजा और देनदारों से रुपये न वसूल होने के कारण उन की आर्थिक-दशा ख़राब हो रही थी। फलतः थोड़े ही दिन में उन्हें अर्थ का अभाव खटकने लगा। अब गांव और खेतों की रक्षा करना कठिन हो गया।

पहले ही कह आये हैं कि रामसुन्दर के गांववाले देव स्वभाव के नहीं हैं। रामसुन्दर के अत्याचार से कितने मर्मान्तिक पीड़ा पा चुके थे। इस समय ठीक विपरीत आचरण होने लगा। गांववाले रामसुन्दर के प्रति अत्याचार करने लगे। पाठकों को यह बात मालूम है कि रामसुन्दर पक्का मकान बनवा रहे थे। किन्तु मकान में काम लगने के थोड़े ही दिन बाद उन के ऊपर विपद् का पहाड़ टूट पड़ने से वह काम समाप्त नहीं होने पाया था। केवल एक घर बना है। अटारी बनाने की सामग्री ईंट, चूना प्रभृति सभी प्रस्तुत थे। कड़ी, बरगा, किवाड़, चौकठ इत्यादि सभी तैयार हो गये थे। रामसुन्दर ने एक दिन देखा, ईंटों पर घास जम गयी हैं, चूना मिट्टी में मिल गया है, और लकड़ी की चीज़ों में आधी से अधिक चीज़ें गायब हो गयी हैं।

रामसुन्दर ने नौकरों को बुलवाया और पूछा—"ये सब चीज़ें क्या हो गयीं?

नौकरों ने जवाब दिया—"हमें क्या मालूम? शायद रात को कोई चुरा ले जाता होगा!"

राम०—तो तुम लोग किस लिये हो ?

नौ०—हमलोग किसी से कुछ बोलते हैं तो सभी गांववाले मिल कर हमें मारने के लिये तैयार हो जाते हैं।

रामसुन्दर के दो नौकर दूसरे गांव के हैं। गांव के लोगों से विना मिलकर चले इनका गुज़ारा नहीं। रामसुन्दर ने एक लम्बी सांस ले, एक नौकर को थाने में नालिश करने को भेजा।

दूसरे दिन दो पहर से कुछ पहले दारोगा साहब मुक़द्दमे की जांच करने आये। रामसुन्दर ने दारोगा साहब के भोजन का पूरा प्रबन्ध किया था। भोजन कर दारोगा साहब ने ताम्रकूट का उपभोग कर शयन किया। पूर्व पुरुषानुक्रमिक प्रथानुसार चौकीदार पांव टीपने लगा। दो तीन घण्टे सोने के बाद दारोगा साहब उठ बैठे।

आर्थिक दशा वैसी न रहने के कारण रामसुन्दर उन की पूजा का विशेष रूप से प्रबन्ध न कर सके। दो चार बातों ही में रामसुन्दर के मन का भाव समझ कर दारोगा साहब समझ गये कि अब इस मुक़द्दमे से किनारा पाना कठिन है।

आपने चौकीदार से चोरी के सम्बन्ध में प्रश्न किया। चौकीदार चालाक था। वह यह जानता था कि दारोगा साहब की पूजा की व्यवस्था नहीं हुई है। गांववालों ही से कुछ दिलवा देने के लिये उसने अपने साथी कान्सटेबल से कह कर दारोगा जी के कान तक इस बात को पहुंचा दिया था। उसने कहा—"हुजूर, इस चोरी का कभी पता लग सकता है ? इतनी बड़ी २ लकड़ी यदि कोई ले जायगा तो वह अब तक रक्खे रहेगा, कभी न जला दिया होगा,

या चीर फाड़ कर कोई चीज बनवा ली होगी। और इन के गिनने में भी तो भूल हो सकती है।"

रामसुन्दर ने कहा—" तू ही कह, कितनी कड़ी, बल्ला, बरगा प्रभृति यहां पर थे ?"

चौकीदार—वह देखा तो था। आप ने जिस प्रकार दश आदमियों के घर से उठा कर अपने यहां ला रक्खा था, सम्भव है, वे भी उसी प्रकार यहां से उठा कर अपने यहां ले गये हों !

रामसुन्दर ने दारोगा साहब से कहा—" यह सुनते हैं, अपने चौकीदार की बात !"

दारोगा साहब कुछ बोले नहीं, धीरे से मुस्कुरा दिया। इस का मतलब यह कि जो कहता है, वह ठीक ही कह रहा है। वे रामसुन्दर के पूर्व-जीवन से पूर्ण परिचित थे।

थोड़ी देर के बाद दारोगा साहब ने पूछा—" आप का किसी पर विशेष सन्देह है ?"

राम०—मैं गांव के सभी आदमियों पर सन्देह करता हूं।

दारोगा—अच्छा, तब आप का मुकद्दमा हो गया। चलो जी, चलो, आज रात में मंझौआं के बदमाशों के घर की खानेतलाशी लेनी है।

सन्ध्या से पहले ही दारोगा साहब चले गये। जांच पड़ताल से जो लाभ हुआ, उसे अब कहने की कोई ज़रूरत नहीं।

तेईसवां परिच्छेद।

पितृ-भ्रातृ-हीन यादव के विषय में जानने के लिये पाठकों को उत्सुकता लगी होगी। इस से हम उन की उत्सुकता बढ़ा उन्हें कष्ट देना नहीं चाहते। अच्छा, सुनिये; माधव के मरने के थोड़े ही दिन बाद यादव गांव के एक आदमी के साथ कलकत्ते चला गया। यादव जिस के साथ कलकत्ता गया था, उस आदमी की एक फल की दूकान गंगा के किनारे पर थी। यादव उसी दूकान में काम करने लगा, भोजनादि के अतिरिक्त यादव को दो रुपये मासिक मिलते थे, ये रुपये यादव अपनी मां के पास मकान पर भेज देता था। काम, काज करने के बाद यादव को थोड़ा सा समय मिलता था, उसी समय वह इस बात की खोज में लगता कि किस प्रकार मेरी उन्नति होगी। कलकत्ते में आने के दो ही वर्ष बाद यादव ने एक नूतन व्यवसाय आरम्भ किया। उस ने देखा, कि उस के परिचित दो तीन आदमी मिठाई वाले की दूकान से खाने की चीज़ें ख़रीद कर शहर में फेरी कर बेंचते हैं। इस काम से उन्हें कम से कम आठ दश आने रोज मिल जाते हैं। यादव अपने मालिक की आज्ञा से यह काम करने लगा। इस में अधिक मूलधन की ज़रूरत नहीं होती। प्रति दिन पांच छः रुपये की चीज़ें काफी हैं। एक रुपये की चीज़ें बेंचने पर तीन चार आने लाभ हो जाते हैं। जो चीज़ें नहीं बिकतीं, वे सन्ध्या के समय लौटा भी दी जा सकती हैं। पांच छः मास के भीतर ही यादव ने देखा कि मां की भली भांति सहायता करने

पर भी मेरे हाथ में लगभग ५० रुपये के जमा है। यादव फ़िज़ूल-खर्ची नहीं करता था। दिहातों से जो सभी गरीब आदमी आकर कलकत्ते में फेरी का काम करते हैं, उन्हें जरा सी भी बुद्धि रहती, तो वे महीने में १५, २० रुपये बड़े आराम से जमा कर सकते; पर शहर में प्रलोभन अत्यन्त अधिक रहता है। चरित्र बल के न रहने पर इस श्रेणी के मनुष्य सहज ही में बाबू बन जाते हैं। दिन के समय बाबूगीरी करने का रास्ता बन्द होने के कारण सन्ध्या के बाद रात के समय इन के पांव में जूता और शिर में कंघी पड़ती है। छोटे २ मकानों में जो पक्के नहीं हैं, उन्हीं में तबले की ध्वनि सुन पड़ती है। इस का फल यह होता है कि ये जो कुछ कमाते हैं, वह कलकत्ते ही में रख आते हैं। मकान जाने के समय बाबूगीरी साथ में लिये जाते हैं। बहुतों को तो मकान पर लिवा चलने के लिये पिता माता या किसी पड़ोसी को आना पड़ता है। यादव इस श्रेणी का आदमी नहीं है। उस का एक मात्र संकल्प यह था, कि चाहे किसी प्रकार, आदमी बनना चाहिये, और माता के दुःख दूर करना चाहिये। कलकत्ते वह जब से आया है, तब से एक पैसा भी फ़िज़ूलखर्च नहीं किया है।

दो तीन वर्ष के बाद यादव ने देखा कि मैं स्वयं एक मिठाई की दूकान कर सकता हूं। एक छोटा मकान भाड़े पर लेकर उस ने दूकान खोल दी। थोड़े ही दिनों में उस की दूकान का नाम हो गया। यादव किसी को ठगता नहीं था। जान बूझ कर वह कोई बुरी चीज़ अपनी दूकान पर नहीं रखता था। जो उस की दूकान

पर से कोई चीज़ ख़रीदता, वह भरसक दूसरी दूकान पर फिर नहीं जाता था।

पांच ही छः वर्ष में उस को आमदनी खासी होने लगी। आमदनी के साथ २ यादव ने अपना कारबार भी बढ़ाया। दूकान के सभी काम अपने ही न कर सकने के कारण उस ने पहले एक नौकर रक्खा था; इस समय दो और नौकर रक्खे। बग़ल के दो और मकानों को भाड़े पर लिया। पास ही एक मकान और भाड़े पर ले कर अपनी मां को भी यहीं बुला लिया। माता उस के विवाह की चिन्ता में लगी। अपनी ओर के एक प्रतिष्ठित घर की कन्या से यादव की शादी हुई। पुत्र की उन्नति देख कर धनञ्जय की स्त्री को अपार आनन्द मिला।

सत्पथ पर रह कर फिजूलखर्च नहीं होने से, बहुत कम आमदनी की भी राह रहने पर मनुष्य किस प्रकार अपनी उन्नति कर सकता है, यादव का जीवन, इस का ज्वलन्त दृष्टान्त है। दूकान करने के दश वर्ष बाद यादव ने दश सहस्र रुपये इकट्ठे कर लिये। यादव की माता ने अनुरोध किया—"बेटा, अपने गांव की उस ज़मीन को छोड़ाने का यत्न करो।"

निठुर रामसुन्दर ने यादव की मां को जिस निर्दयता के साथ मारा था, वह आज भी यादव के मन में कल की घटना सा अङ्कित था। माता की आज्ञा से यादव ने गांव की वर्तमान अवस्था का पता लगाया। कुछ ही दिन में उसे पता लग गया कि रामसुन्दर के इसी जीवन में उन के पाप का फल मिल रहा है। खेत, ज़मीन, गांव सभी उन के हाथ से जाते रहे। लाला साहब के पुत्र ब्रज-

गोपाल ने त्रिलोचन का जमा ख़रीद लिया है। यादव को ब्रज-गोपाल की अपेक्षा भी अधिक रुपये हैं।

यादव ने थोड़े ही दिनों में अपनी पैत्रिक सम्पत्ति और राम-सुन्दर के बचेबचाये खेत और मकान ख़रीद किया। जिस खेत में उस की मां को रामसुन्दर ने खड़ाऊं से मारा था, केवल उसी ज़मीन को यादव अपने लिये रख कर और सब ज़मीन प्रजाओं को मालगुज़ारी पर दे दी। यादव की अब दिहात में जा कर रहने की राय नहीं थी।

जो रमणी, थोड़े से गेहूं के लिये, एक दिन पाषाण-हृदय राम-सुन्दर के पांव पर गिरती थी, इस समय वह पुत्र के पैसे से नित्य गाड़ी पर सवार हो गंगा-स्नान करने जाती है, और इच्छानुसार ग़रीबों को दो चार आने दान भी देती है।

उपसंहार।

इस के बाद रामसुन्दर का क्या हुआ, क्या यह भी कहना पड़ेगा? रामसुन्दर इस समय दया का पात्र है। उसके अन्तिम काल की दुर्गति को वर्णन करने की हमारी इच्छा नहीं है। पाठकों का कौतूहल दूर करने के लिये संक्षेप में एक दो बातें कहेंगे।

धीरे धीरे रामसुन्दर के लिये जीवन का भार असह्य हो गया। खेत-बारी सभी बिक गये, ज़मींदार ने उन के मकान प्रभृति को बेंच दिया, यह पहले ही कह आये हैं। ज़मींदार का देन देने पर रामसुन्दर को जो कुछ थोड़े से रुपये मिले, उसी को ले कर वे काशी जाने का प्रबन्ध करने लगे।

रामसुन्दर की अवस्था देख ब्रजगोपाल सब से अधिक दुःखी हुए। ब्रजगोपाल अपनी नौकरी पर रहते थे। वर्ष लगने पर या दो वर्ष पर एकबार मकान आते थे। रामसुन्दर के करकरवे कोपीन हो काशी जाने के कुछ ही पहले वे एकबार मकान आये थे।

ब्रजगोपाल की दीनदशा अब पलट गयी है। उन ने अपने बाप-दादों की धनप्रतिष्ठा फिर कमा ली है। रामसुन्दर के काशी जाने के समय वे उन की कुछ सहायता करना चाहते थे, और अपने न कह सकने के कारण एक तीसरे आदमी के द्वारा राम-सुन्दर से यह कहवाया था। रामसुन्दर ने यह स्वीकार नहीं किया।

काशी में पहुंचते ही रामसुन्दर को त्रिलोचन से भेंट हुई। उन से किस प्रकार मुख दिखावें, यही सोच कर वे दूसरी ओर जाना चाहते थे; किन्तु त्रिलोचन उन की अवस्था देख पहले की सभी बातें भूल गये, और एक साथ रहने के लिये इस प्रकार झटपट आग्रह किया कि रामसुन्दर को उन का आग्रह मानना ही पड़ा। वे यह नहीं जानते थे कि त्रिलोचन अब तक जीवित हैं और काशी में हैं। एक ही दो बातों में उन्हें मालूम हो गया कि त्रिलोचन के हाथ के कुछ थोड़े से रुपयों के ख़र्च होने के बाद से ब्रजगोपाल उन के काशी के ख़र्च का प्रबन्ध कर रहे हैं। रामसुन्दर मन ही मन ब्रजगोपाल के महत्त्व की आलोचना कर बड़े ही विस्मित हुए।

त्रिलोचन ठीक सहोदर के समान कुष्ठ-रोग-ग्रस्त रामसुन्दर की शुश्रूषा करने लगे। किसी बात या किसी काम से वे ऐसा नहीं प्रकट होने देते थे, कि पहली बातें उन्हें याद हैं। काशी के अपने परिचितों से वे उन्हें गांव-घर का भाई कहा करते थे; किन्तु मानो वे काशी में रह कर रामसुन्दर के आगमन की ही प्रतीक्षा कर रहे थे। हतभागे रामसुन्दर के भाग्य में त्रिलोचन जैसे साधु का संसर्ग-लाभ अधिक दिन नहीं था। इनके काशी आने के एक ही मास बाद त्रिलोचन की काशी में मृत्यु हो गयी। त्रिलोचन के साथ को गंवा कर रामसुन्दर जितना रोये, उतना अपनी स्त्री, और पुत्र के मरने पर भी वे नहीं रोये थे।

इधर रामसुन्दरके रुपये भी खतम हो गये। वे जितनी जल्द मृत्यु की आशा करते थे, उतनी जल्द उनकी मौत नहीं हुई। रामसुन्दर मन ही मन सोच रहे थे, अब रास्ते में बैठ कर भीख मांगने के सिवाय दूसरा उपाय नहीं है। इसी समय उन ने ब्रजगोपाल का एक पत्र पाया। उन ने लिखा था—"उनको (त्रिलोचन को) काशी में शिवलोक की प्राप्ति हुई है। आप काशी में हैं। रुपये की कमी के कारण पीछे आप को काशी वास में कष्ट न हो, यही सोच कर, यदि आप ग्रहण करने में आपत्ति न करें, तो मैं जिस प्रकार उन्हें पांच रुपये मासिक भेजता था, उसी प्रकार आप को भी वह भेजा करूंगा। आपने यहां पर मेरे रुपये लेने से अस्वीकार किया था, इसी से डरते डरते यह पत्र लिख रहा हूं। मैं आप का सम्बन्धी हूं, आप के अग्रज का जामाता हूं, अतएव आप का भी लड़का

ही जैसा हूं; आवश्यकता होने पर आशा है, मेरे इस सामान्य साहाय्य को ग्रहण करने में कुण्ठित नहीं होंगे।"

इस समय रामसुन्दर की ऐसी दशा नहीं कि वे इस अयाचित अनुग्रह की उपेक्षा कर सकें। उन ने पत्रोत्तर में सम्मति प्रकट कर ब्रजगोपाल को लिखा—"यदि इस परम पापी के आशीर्वाद या प्रार्थना का कुछ फल हो, तो वह तुम पाओगे।"

अब लिखने को कुछ नहीं रहा, दुर्बलों के प्रति अत्याचारी, दरिद्रों के रुधिर चूसनेवाले, धर्म के ढकोसला रचने वाले, रामसुन्दर को गलित कुष्ठ-रोग-ग्रस्त अवस्था में काशी ही रख कर हमने अपने गल्प का उपसंहार किया। रामसुन्दर के भाग्य में काशी में मरना नहीं लिखा था। मरने से कुछ पहले उन्हें जो विषम कष्ट भोगना पड़ा, और जिस प्रकार से उनकी मौत हुई थी, उसको अब हम लिखना नहीं चाहते।

समाप्त।